स्वदेशी आन्दोलन

दत्तोपंत ठेंगड़ी

निवेदन

परम श्रद्धेय श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी विगत दो दशकों से देशव्यापी स्वदेशी आन्दोलन का मार्गदर्शन कर रहे हैं। स्वदेशी आन्दोलन के सभी आयामों पर आपका मार्गदर्शन हुआ है।

प्रस्तुत संकलन में माननीय ठेंगड़ी जी के केवल सार्वजनिक भाषण को विषय-वार संकलित करने का प्रयास किया गया है ताकि स्वदेशी आन्दोलन के सभी आयामों पर उनका मार्गदर्शन एक साथ उपलब्ध हो सके।

विषय की व्यापकता तथा विचारों की गम्भीरता के कारण इनका सम्पादन करना सामान्य व्यक्ति के लिए असम्भव है। इसीलिए, प्रस्तुत पुस्तक सम्पादित नहीं, संकलित है। इस संकलन में मात्र इतना ही किया गया है जैसे एक बड़े पुस्तकालय में किताबों को विषय वार अपनी-अपनी अलमारी में रख देते हैं।

प्रस्तुत संकलन में श्रद्धेय ठेंगड़ी जी के भाषण यथा रूप प्रकाशित किये जा रहे हैं फिर भी, भाषणों से पुस्तक की लम्बी प्रक्रिया में गलती होने की सम्भावना बनी रहती है, इसके लिए हम सभी क्षमा प्रार्थी हैं।

निवेदक

डॉ. रणजीत सिंह

स्वदेशी जागरण मंच

जोधपुर

श्रद्धेय स्व. श्री बालचन्द जी मोदी स्मृति

सत् साहित्य

प्रकाशन माला का प्रथम पुष्प

''स्वदेशी आन्दोलन''

लेखक :
दत्तोपंत ठेंगड़ी

प्रथम संस्करण : 5000 प्रति
१३, फाल्गुन वि. सं. २०६०
महाशिवरात्रि
फरवरी, 2004

प्रकाशक :
स्वदेशी विचार केन्द्र, जोधपुर
96, पत्रकार कॉलोनी,
जोधपुर

मूल्य :
15/- मात्र

माननीय श्री दत्तोपंत जी ठेंगड़ी

एक परिचय

इस पुस्तक के सर्जक श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी, एम. ए., एल.एल.बी. से देशवासी सुपरिचित हैं। साठ साल से भी अधिक समय से ये देश के सार्वजनिक और समाज जागरण के क्षेत्र में सक्रिय हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इनकी प्ररेणा का मूल स्त्रोत है। 1935 से 15 वर्ष की किशोरावस्था में इन्होनें वर्धा जिले के आर्वी तालुका की वानरसेना के अध्यक्ष के नाते अपनी सार्वजनिक जीवन यात्रा का विधिवत् शुभारम्भ किया था। 1936-38 तक ये हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी के साथ भी सक्रिय रूप से जुड़े रहे।

रहन-सहन की सरलता, अध्ययन की व्यापकता, चिन्तन की गहराई, ध्येय के प्रति समर्पण, लक्ष्य की स्पष्टता, ध्येय साधना का सातत्य और कार्य की सफलता का विश्वास श्री ठेंगड़ी का व्यक्तित्व रूपायित करते है। अब तक एक सौ से अधिक पुस्तकों और पुस्तिकाओं के माध्यम से देश के शाश्वत और तात्कालिक विषयों का मौलिक विवेचन कर चुके हैं। श्री ठेंगड़ी के समर्पित जीवन और ज्वलन्त व्यक्तित्व के यदि कुछ सोपान गिनाने ही हो तो वे इस प्रकार है-

1920	–	10 नवम्बर को आर्वी (जिला वर्धा) में जन्म।
1935	–	आर्वी तालुका की वानर सेना के अध्यक्ष।
1936-38	–	हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी से सम्बद्ध।
1942	–	अध्यक्ष, केरल प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार सभा।
	–	राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक, उत्तरखेड़ा (केरल)।
1948-49	–	राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के असम व बंगाल के प्रान्त प्रचारक।
1949	–	संस्थापक सदस्य, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्।
1949-52	–	अध्यक्ष, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्, विदर्भ प्रदेश।
1950-51	–	संगठन मंत्री, इंटक, मध्यप्रदेश।
1951-53	–	संगठन मंत्री, भारतीय जनसंघ, मध्यप्रदेश।
1955	–	भारतीय मजदूर किसान संघ की स्थापना की।
1956-57	–	संगठन मंत्री, भारतीय जनसंघ, दक्षिणाचंल।
1964-76	–	सदस्य, राज्यसभा।
1968-70	–	सदस्य, राज्यसभा उपाध्यक्ष मण्डल।
	–	सदस्य, जन-उद्योग समिति।
1968-69	–	संयोजक, केन्द्रीय मजदूर संगठनों की राष्ट्रीय समन्वय समिति।

1974 – सदस्य, अध्यक्ष मण्डल, मजदूर यूनियनों का राष्ट्रीय सम्मेलन।
1975 – संयोजक, राष्ट्रीय श्रम संघर्ष समिति।
1976 – सचिव, लोक संघर्ष समिति (आपात्काल में)।
1979 – भारतीय किसान संघ की स्थापना।
1991 – स्वदेशी जागरण मंच की स्थापना।

विदेश

1969 – संसदीय शिष्ट मण्डल के सदस्य के नाते रूस गमन।
1977 – द्वितीय रंगभेद विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, जनेवा में प्रतिनिधि।
1979 – अमरीका सरकार के निमंत्रण पर वहां के ट्रेड यूनियन आन्दोलन के अध्ययन हेतु अमरीका यात्रा।
1985 – 3 से 19 अप्रेल, ऑल चायना फेडरेशन ऑफ ट्रेड यूनियन्स के निमंत्रण पर भारतीय मजदूर संघ का शिष्ट मण्डल लेकर चीन गए।
– दिसम्बर, 4 से 13, इण्टरनेशनल लेबर ऑर्गनाइजेशन की जकार्ता में दसवीं रिजनल कांफ्रेंस में प्रतिनिधि।

अन्य सम्बन्धित संस्थाएं

अखिल भारतीय श्री मां जन्म शताब्दी समारोह समिति	उपाध्यक्ष
भारतीय शिक्षण मण्डल	संरक्षक सदस्य
भारतीय बौद्ध महासभा	सहयोगी सदस्य
भारतीय आदिम जाति सेवक संघ	सहयोगी सदस्य
कर्मवीर हरिदास जी आवले स्मारक समिति	परामर्शदाता
पं. दीनदयाल उपाध्याय स्मारक समिति	सदस्य
भारत मंगोलिया सांस्कृतिक समिति	सदस्य
श्री अरविंदु सोसाइटी	सदस्य
भारतीय खेतिहर मजदूर संघ	परामर्शदाता
विश्व हिन्दु परिषद्	परामर्शदाता
पशु हिंसा विरोधी समिति	आजीवन सदस्य
अखिल भारतीय विमुक्त जाति सेवक संघ	आजीवन सदस्य
वनवासी कल्याण परिषद्	सदस्य कार्यकारिणी
भारतीय साहित्य परिषद्	सदस्य कार्यकारिणी
केन्द्रीय नागरिक परिषद्	सदस्य
पं. दीनदयाल उपाध्याय जन्मभूमि स्मा. स., नगला चन्द्रभान (मथुरा)	सदस्य

आर्थिक साम्राज्यवाद

दूसरे महायुद्ध के पश्चात् साम्राज्यवादी देश, अन्तराष्ट्रीय परिस्थितियों के दबाव के कारण, सभी औपनिवेशिक देशों को स्वतंत्रता देने के लिए विवश हुए थे। इसका कारण ऐसा है कि दूसरे महायुद्ध के पश्चात् अन्तरर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का ऐसा दबाव निर्माण हुआ कि गोरे साम्राज्यवादी देशों को अपने ही देशों पर साम्राज्य चलाना असम्भव हो गया था, इस दबाव में हमें स्वराज्य मिला। 15 अगस्त, 1947 को हिन्दुस्तान को स्वातन्त्र्य मिला, हमारे नेता भले ही कहे कि यह हमारे पराक्रम के कारण मिला, हमारी बहादुरी के कारण मिला, यदि यह सही है तो सिंगापुर ने कौन सी बहादुरी दिखाई, श्रीलंका आदि छोटे–छोटे देशों ने कौन सी बहादुरी दिखाई, सबको स्वातन्त्र्य मिला। वास्तव में अन्तरर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के दबाव के कारण ही हमें स्वातन्त्र्य मिला।

स्वराज्य तो दे दिया लेकिन स्वराज्य देने के पश्चात् उनके सामने महा संकट खड़ा हुआ। जो पूर्व साम्राज्यवादी देश थे उनके सामने महा संकट खड़ा हुआ। **जब तक साम्राज्य था, तब तक सब लोगों को ऐसा लगता था कि ये बहुत समृद्ध देश है, वास्तव में वे समृद्ध देश नहीं थे। वे अपने पैरों पर खड़े नहीं थे। उनके पास अपने कोई साधन स्त्रोत माने रिसोर्सेज़ नहीं थे। अर्थशास्त्र में इस शब्द पर ध्यान देने की आवश्यकता है।** जैसे जापान और भारत की बात है। जापान स्वयं एक समृद्ध देश नहीं है। जापान के पास कोई संसाधन नहीं है। लोहा भी चाहिए तो बाहर से लाना पड़ता है। तांबा भी चाहिए तो बाहर से लाना पड़ता है। इसीलिए कहा जाता है कि जापान गरीब देश है परन्तु जापानी अमीर है।

हमारे पास संसाधन बहुत है। हमारे पास मनुष्य बल बहुत है। हमारे पास प्राकृतिक संसाधन बहुत है और आज जो सांईस और टैकनॉलोजी की बात करते हैं तो आज भी संसार की नम्बर तीन की

सांईटिफिक कॅम्यूनिटी हम है। जबकि यहां से विदेशों में बौद्धिक पलायन हो रहा है, तो भी हम दुनिया की नम्बर तीन की साईंटिफिक कम्यूनिटी है। पहला अमेरिका, दूसरा था सोवियत संघ और तीसरा है हिन्दुस्तान। लेकिन हमारे बारे में कहा जाता है भारत धनी देश है लेकिन इसकी जनता गरीब है।

शोषण पर टिकी अर्थव्यवस्था

अन्तरर्राष्ट्रीय दबाव के कारण स्वतंत्रता तो उन्होनें दे दी, लेकिन स्वतंत्रता देने के बाद उनकी हालत जर्जर हो गई। उस समय हमारे यहां भ्रांति थी कि गोरे साम्राज्यवादी देश बहुत समृद्ध हैं। वास्तव में ये देश समृद्ध नहीं थे। उपनिवेशों के शोषण के आधार पर वे समृद्ध दिखाई देते थे। उदाहरण के लिए यहां कपास पैदा होती थी। उनका शासन था, इसीलिए कम–से–कम मूल्य पर यहां की कपास खरीदते थे और इंग्लैण्ड ले जाते थे। मैनचेस्टर और लंकाशायर में उसका कपड़ा बनाते थे, और फिर यहां लाकर अधिक कीमत में, वही कपड़ा बेचते थे। उपनिवेशों का दो तरह का काम रहता था। साम्राज्यवादी देशों को कच्चा माल सस्ती दरों पर देना और साम्राज्यवादी देशों के उत्पादों के लिए बाजार का काम भी करना। दोहरा शोषण होता था। इसके कारण वे समृद्ध थे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् स्वतन्त्र हुए सभी विकासशील देशों को 'तीसरी दुनिया' कहा जाता है। विश्व का मानचित्र देखने से पता चलता है कि ये सभी देश विश्व के दक्षिणी भाग में है और गोरे साम्राज्यवादी देश उत्तरी भाग में है। **तो तृतीय विश्व के सभी देशों को स्वराज्य दे दिया, फिर शोषण किसका करें, यह सवाल था। और शोषण करने की इजाज़त तब स्वतन्त्र देश कैस देंगे ? कौन देश अपना शोषण होने देगा ? यदि शोषण नहीं होगा तो उनका आर्थिक ढ़ांचा चरमरा जाएगा, ऐसी उनकी हालत थी।** आज तो हम उनके नए साम्राज्य की बात कर रहे हैं, किन्तु 1947 में ऐसी हालत थी,

यदि अन्य देशों को उन्होनें आर्थिक शोषण नहीं किया तो उनका आर्थिक ढ़ांचा टूट जाएगा। क्या करना चाहिए ? उन्होनें उसमें से रास्ता निकाला।

शोषण जारी रखने के उपाय

उन्होनें सोचा कि कोई भी स्वतंत्र देश खुद अपना शोषण तो होने नहीं देगा। तो पहले उन्होनें डिक्टेटरशिप वाले देशों को लिया। दूसरे महायुद्ध के पश्चात् जितने देशों को स्वतन्त्रता मिली उनमें से ज्यादातर देश डिक्टेटरशिप के थे। डिक्टेटरशिप में इनके लिए सहूलियत क्या थी ? देश में लोकतन्त्र नहीं, जनजागरण नहीं, लोकशक्ति नहीं। डिक्टेटर है उसके कोई पांच, पांच सौ, पांच हज़ार ऐसे कोई समर्थक हैं। इतने लोगों को एक बार यदि हमने खरीद लिया, तो इन लोगों को बाध्य किया जा सकता है, कि तुम सुरक्षित हो। तुमको जितनी चाहिए हम आर्थिक सहायता देते हैं। अपनी जनता का आर्थिक शोषण करने की हमें इजाजत दो। ऐसा इनके साथ समझौता करना सम्भव है। ऐसे समझौते हुए। इसी में से मार्कोस आदि निकले। थोड़े लोगों को खरीद लेना, उन्हें कहना हमारी नीतियां चलाओ, जिससे हमारा मुनाफा बढ़ सके, हम तुम्हारे देश का शोषण कर सकें। बहुत से डिक्टेटर खरीदे जाने वाले थे, ऐसे स्थानों पर उन का आर्थिक शोषण का काम शुरू हुआ।

सबके शोषण की रणनीति

सबका शोषण कैसे करना है, इसीलिए रणनीति बनाएंगे, कि सभी नवस्वतंत्र देशों में, अमेरिका के लिए उपयुक्त, मैं अमेरिका शब्द का प्रयोग कर रहा हूं, माने, सभी गोरे देशों के लिए, उपयुक्त, अनुकूल, ऐसे लोगों को सरकार में लाना। राज्यकर्ता इन देशों के, ऐसे ही हो, जो अमेरिका के लिए अनुकूल हो और स्वाभाविक रूप से यदि ऐसे लोग नहीं आ सकते तो, खून–खराबा करते हुए भी, अमेरिका के लिए अनुकूल लोगों को लाना, जैसे 1970–80 के दशक में चिली देश के शासक सल्वेडोर अलेण्डी का

खून किया गया, तो राज्यकर्ता अपने अनुकूल रहे, यह पहली बात। रणनीति का दूसरा हिस्सा यह था कि इन सभी देशों के लोगों को, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक घटनाओं के बारे में, पूरी तरह अंधेरे में रखना, टी.वी. है, रेडियो है, समाचार पत्र है, बड़ी–बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय घटनाएं जो हैं, उनके बारे में अंधेरे में रखना। फिर तीसरा था, कि यह जो अपने लिए अनुकूल राज्यकर्त्ता लाए गए हैं, जनता को पता न लगते हुए, उनके पार्लीयामेन्ट को पता न लगते हुए, उनके साथ, गोरे देशों के लिए अनुकूल ऐसे समझौते करना। फिर समझौते जैसे के जैसे प्रकाशित नही करना, उसमें से जो हिस्सा अच्छा होगा, मीठा–मीठा, गब–गब, तो उतना ही प्रकाशित करना, पूरा प्रकाशित नही करना, ताकि एकदम विरोध नहीं होता और जब अमल करना शुरू होता है, फिर लोगों को पता चलता है कि यह तो बड़ा घातक समझौता हुआ, किन्तु उस समय पर क्या करना, सब लोग कन्फ्यूज़ हो जाते हैं, लगता है कि आकाश से कुल्हाड़ी गिर गई, अब क्या करना, फिर कोई प्रतिकार नहीं कर सकेगा, अपना काम हो जाएगा। यह उनकी रणनीति थी।

भारत के शोषण की रणनीति

लेकिन जहां प्रजातन्त्र था वहां क्या करोड़ों लोगों को थोड़े ही खरीद सकते हैं ? वहां क्या करना, एक प्रश्न था। हिन्दुस्तान जिसे दुनिया का सबसे बड़ा प्रजातन्त्र कहा गया है। बहुत लोग इस शब्द से खुश हो जाते है। वे भूल जाते हैं कि सबसे बड़ा प्रजातन्त्र कहा गया, प्रजातान्त्रिक देश नहीं कहा गया। दोनों में अन्तर है सबसे बड़ा प्रजातन्त्र एक बात है, प्रजातन्त्रिक देश दूसरी बात है। यहां फिर से शोषण की प्रक्रिया कैसे शुरू हो ? यह उनके सामने समस्या थी। हमारे देश के राज नेताओं के सामने दूसरी समस्या थी। हमने देश में विदेशी मॉडल लाया। संविधान जो बना है वह अपनी भूमि की उपज नहीं है। हिन्दुस्तान में कोई प्रजातन्त्र नहीं क्या। पहले हजारों साल तक

डैमाक्रेसी रही है। भारतीय प्रजातन्त्र अलग रूप का था इंग्लैण्ड और पश्चिम का प्रजातन्त्र अलग अलग रूप का है। हमारे देश में जो प्रजातन्त्र रहा है उसके लिए भारतीय मानस पहले से ही तैयार है। परन्तु वहां के प्रजातन्त्र के लिए भारतीय मानस तैयार नहीं है। लेकिन पश्चिम में प्रजातन्त्र आया है उसके लिए वहां के लोगों का मानस तैयार था।

उनकी संस्था के लिए इंग्लैण्ड का ही उदाहरण लें। हमने इंग्लैण्ड का ही अधिक अनुकरण किया दूसरी देशों का थोड़ा ही किया। हमने प्रजातन्त्र की धारणा इंग्लैण्ड से ली। इंग्लैण्ड में लिखित संविधान नहीं है। हमारे यहां जैसे कागज पर लिखा है, चुनाव हो गया पार्लियामैन्ट बन गई। वहां ऐसा नहीं हुआ। 1215 में मैंगनाकार्टा हुआ। उसके पहले से वहां लोकतन्त्र के लिए संघर्ष चल रहा था। होते–होते आज इंग्लैण्ड की डैमोक्रेसी हम देखते है। 1832 में सर्वप्रथम कुछ महिलाओं को मताधिकार मिला। याने वहां भी धीरे–धीरे ही हुआ है विकास। इस संघर्ष के दौरान वहां एक विचार तैयार हुआ, जो उनके प्रजातन्त्र के अनुकूल है। हमारे यहां उस तरह का संघर्ष हुआ ही नहीं। इस कारण वैसा मानस तैयार होने की यहां सम्भावना नहीं थी। हमने एकदम उधार का संविधान लिखकर थोप डाला। धारणा वहां की, उसको स्वीकार करने के लिए आज भी भारतीय जनमानस तैयार नहीं। उस प्रकार के प्रजातन्त्र के लिए जो स्वभाव चाहिए, वह देश में नहीं। संविधान हमारा नहीं, इस भूमि की उपज नहीं। हमारे देश के ढ़ाँचे और इंग्लैण्ड के ढ़ाँचे दोनों में अन्तर है।

विदेशी संविधान भारत के अनुकूल नहीं

कारण यह था कि हिन्दुस्तान का संविधान हिन्दुस्तान के लिए उपयुक्त नहीं था। बड़े–बड़े श्रेष्ठ विचारकों ने यह चेतावनी बहुत पहले से दी थी। 1908 में गांधी जी ने "हिन्द स्वराज्य" नाम की पुस्तिका लिखी। स्पष्ट रूप से लिखा कि इंग्लैण्ड का संविधान हमारे देश के लिए ठोक नहीं रहेगा। 1915 में योगी अरविन्द ने कहा ब्रिटिश का बहुमत वाला

प्रजातन्त्र हिन्दुस्तान में चलेगा नहीं। 1926 में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने जेल में रहते हुए एक किताब लिखी उसमें उन्होनें कहा कि यदि इंग्लैण्ड के टाइप का इलैक्शन यहां आता है तो यहां महान भ्रष्टाचार होगा, लोग खरीदे जायेंगे, देश में अशान्ति होगी। स्वराज्य प्राप्त होने के कुछ वर्ष पूर्व एक महान विचारक मानबेन्द्रनाथ राय ने एक किताब लिखी "पार्टी पॉवर एण्ड पॉलीटिक्स" उसमें उन्होनें कहा कि वहां के लोग बहुत सुशिक्षित है यहां लोग शिक्षित नहीं है। जब तक जन शिक्षा का पूरा विस्तार नहीं होता तब तक यदि यहां प्रजातन्त्र आयेगा तो गड़बड़ हो जाएगी।

जिस समय संविधान बन रहा था उस समय परमपूज्य श्री गुरूजी ने कहा कि यह जो फैड्रेलइज्म की बात कर रहे हैं इससे बहुत गड़बड़ होने वाली है। श्री गुरूजी ने अपनी ओर से कुछ सुझाव भी दिये। लोकनायक जयप्रकाश नारायण और आचार्य विनोबा भावे और एम. एन. राय आदि कई लोगों ने कहा कि **"पार्टीविहीन प्रजातन्त्र होना चाहिए।" राजनैतिक पार्टी यह जो पाश्चात्य धारणा है यह किसी के लिए भी उपयुक्त नहीं है। उनके लिए भी नहीं है। यह समाप्त होनी चाहिए पार्टीविहीन प्रजातन्त्र होना चाहिए।** श्रेष्ठ विचारकों ने, जिन्होनें प्रधानमंत्री नहीं बनना था, बड़े श्रेष्ठ विचार दिए थे। किन्तु संविधान बन गया। निरक्षरता और गरीबी बहुत बड़ी मात्रा में होने के कारण, जिन्हें जल्दी से जल्दी हकूमत में आने की इच्छा थी ऐसे लोगों के देशी विदेशी कैपिटलिस्टों के साथ समझौते हुए। उनके पैसों के भरोसे वे हकूमत में आये। इनकी हकूमत के भरोसे उनको पैसा बनाने का मौका मिला। इस तरह की बातें हुई और हम लोग आगे बढ़ गये। यह सारी बातें तो समाचार पत्र किसी भी कारण नहीं देंगे। क्योंकि समाचार पत्रों में केवल सनसनीखेज खबरों का ही महत्व हो सकता है। राष्ट्र की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बातें आनी चाहिए, ऐसा नहीं।

वोट खरीदो और चुनाव जीतो

हमारा देश प्लूरलिस्टिक (Pluralistic) समाज है, वहां प्लूरलिस्टिक (Pluralistic) नहीं है। सबसे बड़ी बात कि हमारे यहां

सुशिक्षित लोगों की संख्या बहुत कम है। यहां के 44 करोड़ लोग पूर्ण निरक्षर है। 12 करोड़ लोग आधे निरक्षर हैं। हमारे देश की राजनैतिक पार्टियां अपना घोषणा पत्र छाप कर करोड़ों लोगों में बांटती है। जहां 44 करोड़ पूर्ण निरक्षर है। 12 करोड़ अर्ध निरक्षर है। कौन पढ़ेगा आपका घोषणा पत्र। वहां मतदान घोषणा पत्र, कार्यक्रमों के आधार पर होता है, क्योंकि शिक्षा है। दूसरे यहां 50 से 60 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे हैं। वहां ऐसी हालत नहीं है। गरीबी की रेखा के नीचे के कारण शक्ति प्राप्त करने का आसान तरीका यहां वोट खरीदना है। दहशतवाद एक नया तत्व अभी आ गया। इसे अगर छोड़ भी दिया तो वोट खरीदना, यह शक्ति प्राप्त करने का छोटा रास्ता है।

वोट तरह–तरह से खरीदे जा सकते है। गैर इज्जतदार पद्वति से भी खरीदे जा सकते हैं और इज्जतदार पद्वति से भी खरीदे जा सकते हैं। उसके लिए पैसा चाहिए। पैसा पैसे वाले से आयेगा गरीबों से नहीं आ सकता। पैसे वाला यदि पैसा देगा वह अपनी शर्त लगायेगा। वह कोई हर्षवर्धन नहीं है। जो कहेगा कि मैं तो माया के जाल में फंस गया हूं नेता जी आप आ गये मेरा खजाना लूट कर ले जाइये, ऐसा कोई नहीं कहेगां जो एक पैसा देगा तो उसकी शर्त होगी और शर्त यही होगी कि हमारे पैसे से यदि आप हकूमत में आ जाते हो तो हमें अपना पैसा बढ़ाने के लिए शोषण ही इजाज़त देनी चाहिए। इसी शर्त पर पैसा दिया जाता है, जिनसे पैसा लिया जाता है, उनके सामने शासकों की आंखे शर्म से झुकी रहती है। पैसे वालों के ये कबूतर नेता उनके सम्मुख गुटर–गूं नहीं कर सकते। भले ही वे बातें समाजवाद की करें, लेकिन व्यवहार में उनका ही साथ देंगे। इसी आधार पर पैसा दिया जाता है। एक कहावत है आप मेरा लाभ देखो मैं तुम्हारा लाभ देखूंगा, मैं तुम्हारी पीठ खुजाता हूं तुम मेरी पीठ खुजाओ। तो बड़े पैसे वाले और राजनेताओं का इस तरह का समझौता है।

राष्ट्रीय नीतियों में हस्तक्षेप

जब पैसे वाले कहता हूं तो मेरा मतलब है, देशी और विदेशी पैसे वाले। विदेशी पैसे वाले से मेरा मतलब है, बहुराष्ट्रीय कम्पनीयां, देशी पैसे वाले से मेरा मतलब है, केवल 25–30 औद्योगिक परिवार जो ऊपर के है, माने एकाधिकार वाले पूंजीपति। यह जो मध्यम और छोटे उद्योग वाले हैं उनकी कोई गिनती नहीं। न तो देश के अर्थशास्त्र में छोटे और मध्यम वर्ग के पूंजीपतियों की गिनती होती है और न ही विश्व की अर्थव्यवस्था में इनके योगदान की चर्चा होती है। हमारे लिए, मजदूरों के लिए तो छोटे उद्योग ही बड़े महत्व का विषय है लेकिन राष्ट्रीय पॉलिसी जब बनती है तो मध्यम और छोटे उद्योगों का कोई ज्यादा हिसाब नहीं होता, जो 25–30 औद्योगिक घराने हैं उनका हिसाब होता है। यह विदेशी पैसे वाले तथा राजनेताओं का मिलकर षड़यन्त्र हो जाता है। एकदम पता तो चलता नहीं। जनता वैसे भी जागरूक नहीं है किन्तु हकूमत में आने के बाद धीरे–धीरे उनकी पॉलिसीयों को अमल में लाना बाध्य हो जाता है। इस तरह की परिस्थिति हिन्दुस्तान में आयी।

विदेशी आर्थिक घुसपैठ

राष्ट्र का राष्ट्र के नाते विचार करने वाले लोगों के ध्यान में यह बातें थी। पहली बार पी. एल. 480 के अन्तर्गत यहां गेहूं आया उस समय राष्ट्रवादी लोगों ने कहा कि, क्यों ला रहे हो ? हमारे देश में गेहूं है। यदि कम है, तो हमारे किसानों को सरकार प्रोत्साहन दे। वे देश के लिए आवश्यक गेहूं पैदा कर सकते हैं। वे बोले इनको समझ नहीं है, इनको अर्थशास्त्र पता ही नहीं है, अर्थशास्त्र बहुत टेढ़ी खीर है।

सबसे ज्यादा खलने वाली बात 1965 में हुई। पाकिस्तान के साथ नहरी पानी का विवाद चल रहा था और स्पष्ट रूप से हिन्दुस्तान के हित के विपरीत, पाकिस्तान के लिए अनुकूल, ऐसे समझौते पर भारत सरकार ने हस्ताक्षर किये। **उस समय परमपूज्य श्री गुरूजी ने वक्तव्य दिया। जिसमें कहा कि यह बहुत बड़ी गलती है। यह गलत काम है, यह**

आप भी जानते है। और आप क्यों कर रहे हैं, यह हम जानते है। **"विश्व बैंक के दबाव में आकर आप यह काम कर रहे है। विदेशी पूंजी के दबाव के कारण यदि समझौता करने का अभ्यास बना तो देश में विदेशियों का आर्थिक साम्राज्य आ जाएगा।"** यह वक्तव्य **श्री गुरूजी ने 1965 में दिया था।** इन बातों की ओर ध्यान देने की न तो सामान्य व्यक्ति को और न समाचार पत्रों को फुर्सत है। वह अपनी दुकान, मकान, बैंक बैलेंस देखेगा कि अर्थव्यवस्था का अध्ययन करेगा। जिन्होनें अर्थव्यवस्था का अध्ययन करना है वे खरीदने–बेचने योग्य वस्तुएं बन गए हैं।

और यह रोग बढ़ता चला गया। पहले विदेशी सहभागिता (फॉरेन कॉलेबरेशन) के समझौते हुए। उनमें देश के हित में कुछ प्रतिबंधक शर्ते होती थी। इस कारण देशवासियों ने उस पर विशेष आपत्ति नहीं की और ये आत्मघाती नीतियाँ फलने–फूलने लगीं।

भारत में आर्थिक साम्राज्यवाद

जिन्होनें यहां आर्थिक गुलामी लादी है बड़े चतुर पुरूष हैं, वे पहले से भूमिका तैयार कर रहे हैं। वह भूमिका क्या है ? एक तो उन्होनें सोचा कि यहां का जनमानस ऐसा बनाना चाहिए कि आर्थिक स्वातन्त्र्य कोई अच्छी बात नहीं है। आर्थिक स्वातन्त्र्य की बात भारतीयों के मन में आएगी, यह पहले से ही उन्होनें भांप लिया था। इसीलिए आर्थिक स्वातन्त्र्य वांछनीय नहीं है, यह प्रचार पहले से शुरू हुआ। आर्थिकता का अन्तरराष्ट्रीयकरण होना चाहिए, कौन नहीं चाहेगा ? बड़ी इज्ज़त बढ़ती है। पर क्या वैश्वीकरण हो रहा है ? ग्लोबलाइजेशन का मतलब यह होना चाहिए कि अन्तरर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के हम आवश्यक अंग बन गए। इसमें आपत्ति नहीं परन्तु यह समानता के आधार पर हो किन्तु अन्तरर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के यदि हम गुलाम बन जाते हैं, उनके अधीन काम करने वाले, उनके गुलाम के नाते काम करने वाले बन जाते हैं। तो यह तो वांछित नहीं।

यही बात एक बार पहले आई थी। दूसरा महायुद्ध समाप्त हुआ था, कांग्रेस के नेताओं को छोड़ना शुरू हुआ था लोगों में फिर से चर्चा शुरू हुई थी कि पूर्ण स्वराज्य हमें चाहिए। हिन्दुस्तान को छोड़ना तो बाध्य हो गया था तो भी कुछ न कुछ तो अपना आरक्षित होना चाहिए। इस फिक्र में अंग्रेज साम्राज्यवादी थे। महायुद्ध के समय जब कांग्रेस के नेता जेल में थे, उस समय वायसराय के ऐक्जीक्यूटिव कौन्सील में जो लोग थे, उनके द्वारा सूक्ष्म प्रचार अंग्रेज सरकार ने शुरू किया। आज दुनिया बदल गई है, दुनिया का शत्रु हिटलर अब समाप्त हो गया है। रूस और अमरीका अब दोस्त बन गये है। दुनिया छोटी हो रही है, संचार के साधन, यातायात के साधन बढ़ गये हैं। अब हम एक विश्व की अवस्था में जा रहे हैं, ऐसे समय स्वराज्य की बात करना दकियानूसी है। स्वराज्य माने क्या ? ये लोग जो पूर्ण स्वराज्य की मांग कर रहे हैं, बाकी दुनिया से कटना चाहते हैं, अलगाव चाहते हैं।

एक चतुर पुरूष थे, सर सी. पी. रामास्वामी अय्यर, इन्होनें एक नारा दिया, उस नारे में और आज के अन्तरर्राष्ट्रीयकरण में कितना अन्तर है, यह जरा आप देखिए। **उन्होनें मोटो दिया, नये हालात में हमें अन्तरराष्ट्रीयता का विचार करना चाहिए। इसीलिए स्वतन्त्रता नहीं आपसी निर्भरता हमारा उद्देश्य चाहिए। अब आपसी निर्भरता में तो कोई आपत्ति नहीं। वास्तव में अंग्रेजों के मन में जो आपसी निर्भरता थी वह समानता के आधार पर नहीं थी। उनका ऊपर का हाथ रहेगा। हमारा नीचे का हाथ रहेगा। लेकिन अंग्रेजों के अनुकूल जनमानस बनाने के लिए एक बड़ा शब्द दिया गया : स्वतन्त्रता नहीं आपसी निर्भरता।** और जो स्वराज्य की बात करते हैं वे दकियानूसी है। सारे जगत से अपने को दूर करना चाहते हैं। ऐसी गलतफहमी फैलाई गई। आज भी वही हो रहा है। जो स्वदेशी की बात कर रहे हैं, दकियानूसी है, उनको पता ही नहीं कि दुनिया कहां जा रही है?

आज दुनिया कितनी छोटी हो रही है। यह समझ स्वदेशी का जो प्रचार कर रहे हैं वे बाकी दुनिया से स्वयं को काट लेने का विचार कर रहे हैं। यह गलत बात है। अब हम लोगों को इकट्ठा करने का विचार करना चाहिए। जो स्वदेशी का विचार करते हैं वे अलगाव चाहते हैं कि नहीं ? हम हिन्दू हैं। हिन्दू हमेशा मानवतावादी रहा है। वैश्विक विचार लेकर चलने वाला है। हम तो वसुधैव कुटूम्बकम मानने वाले है। सम्पूर्ण विश्व एक कुटूम्ब है। हम अलगाववादी नहीं है ! लेकिन अन्तरर्राष्ट्रीयकरण के नाम पर कुछ वेस्टिड इंटिरैस्ट रखने वाले देशों और कैपिटिलिस्टों ने हमारे देश को अपना गुलाम बनाने के लिए एक अच्छा नाम दिया आर्थिकता का अन्तरर्राष्ट्रीयकरण। बहुत देर से ऐसा प्रचार चल रहा है कि भारत की अर्थव्यवस्था का ग्लोबलाइजेशन करना चाहिए। स्वदेशी का प्रचार करने से आइसोलेशन आ जाता है, यह बात दकियानूसी है। ऐसी बात नहीं। **हम समानता के आधार पर विश्व आर्थिकता का प्रारूप चाहते हैं। हम समानता का आधार चाहते हैं।**

आर्थिक साम्राज्यवाद के लिए प्रोपेगेण्डा

तो कौन सा स्वतंत्र देश अपना शोषण करने देने के लिए तैयार हो जाएगा, कोई नहीं तैयार होगा, इसके लिए क्या किया जाए उनकी मानसिकता बनाई जाए, इस दृष्टि से कि विकासशील देशों के लोग राष्ट्रभक्त न हों, वहाँ पाश्चात्य रीति–नीति व पद्वति का प्रचार–प्रसार किया जाए, लोगों का योजनापूर्वक पश्चिमीकरण किया जाए। ऐसे ही संस्कार भ्रष्ट लोग उन पश्चिमी शोषक देशों के सहयोगी बन सकेंगे। तो अभी से प्रोपेगेण्डा शुरू किया जाए। तो 1948 से नहीं, 1945 से ही प्रोपेगेण्डा शुरू हुआ जिसके कारण हमारे यहां के इंग्लिश एज्यूकेटिड लोगों के मन पर बहुत प्रभाव हुआ, उन्होनें (गोरे देशों ने) कहा कि कोई भी नव–स्वतंत्र देश अपने पैरो पर खड़ा हो ही नहीं सकता, जब तक हमारा इन्वेस्टमेन्ट वहाँ नहीं जाता, हमारा पैसा वहाँ नही जाता, तब तक वो अपने पैरो पर खड़ा नहीं हो सकता। और फिर कहा, कि कोई भी नव–स्वतंत्र देश जब तक

हमारी टेक्नोलोजी नहीं लेता, जब तक हम उसे टेक्नोलोजी नहीं देते, तब तक अपने पैरो पर खड़ा नहीं हो सकता। अब यह इतना प्रचार जो हुआ, और यह हमारे इंग्लिश एज्यूकेटिड लोगों की विशेषता है, कि वहां से जो प्रचार होता है, उसका सबसे ज्यादा असर इनके ऊपर होता है। सामान्य लोगो पर इतना नहीं होता, इंग्लिश एज्यूकेटिड लोगों पर होता है, उन्होनें भी मान लिया, कि फॉरेन इन्वेस्टमेन्ट के बगैर काम ही नहीं चलेगा, फॉरेन टेकनोलोजी के बगैर काम ही नहीं चलेगा, वास्तव में यह तर्कशुद्ध भूमिका नहीं है।

विदेशी पूंजी निवेश

आर्थिक साम्राज्य की वाहक

भारत में विदेशी आर्थिक साम्राज्य की जड़ें जमाने का प्रयास तीन माध्यमों द्वारा प्रारम्भ हुआ अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष (आई. एम. एफ.), विश्व बैंक (वर्ल्ड बैंक), बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ (मल्टीनेशनल कम्पनीज़)।

उसकी ये तीन एजेंसियाँ थी। विदेशी पूंजी के हाथ लम्बे होते हैं। यह हम समझ नहीं पाते हैं कि उनकी पहुँच कहाँ तक है। अपनी भावी रणनीति को क्रियान्वित करने के वर्षों पहले से उन्होनें हम लोगों को भ्रमित और पथभ्रष्ट करने का प्रयास प्रारम्भ कर दिया था। इसका बोध सभी को हो सके, इसके लिए कुछ उदाहरण देना आवश्यक है अन्यथा इसे समझना कठिन होगा। अब यही देखें कि यहाँ बैठे हुए लोगों को भी यही तो लगता होगा कि पैसे का प्रवाह विकसित देशों की ओर से विकासशील देशों की ओर आता है। हम सबकी यही धारणा है कि 'अरे भाई ! जो धन ऋण (कर्ज) के रूप में आता है उस पर तो सूद देना पड़ेगा, लेकिन जो सहायता के रूप में प्राप्त होता है उसका तो अर्थ यही होता है कि उसे वापस नहीं करना है। हमको यदि बेचारे सहायता दे रहे हैं तो हमें उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए, न कि नाराज़ होना चाहिए।' किन्तु क्या यह सत्य

है कि विकसित देशों से विकासशील देशों की ओर धन आ रहा है ? यह एकदम झूठ है–नितान्त असत्य। बात बिल्कुल इसके विपरीत है। एक झूठ को सौ बार सत्य के रूप में प्रतिपादित करने पर वह सत्य मान लिया जाता है, यह जर्मनी के तानाशाह हिटलर के प्रचारमंत्री डॉ. गोएबल्स का सिद्धांत था। इसके उदाहरण के रूप में कुछ वर्ष पूर्व के कुछ आँकड़े मैं बताता हूँ। विकसित देशों ने विकासशील देशों के साथ जो व्यवहार किया, उसके उदाहरण से सब स्पष्ट हो जायेगा। ये आँकड़ें सन् 1991 के हैं। उस वर्ष विकसित देशों ने विकासशील देशों को 49 अरब डॉलर दिये थे, और उसी वर्ष में प्रोफिट रिपेट्रिएशन के रूप में अर्थात् इन देशों से प्राप्त मुनाफे के रूप में 147 अरब डॉलर की धनराशि विकासशील देशों से विकसित देशों की ओर गयी। प्रचार विकासशील देशों को सहायता देने का तो हुआ। इसका लेखा–जोखा करने पर पता चलता है कि 98 अरब डॉलर की धनराशि विशुद्ध मुनाफे के रूप में साम्राज्यवादी देशों में गयी।

राज्यकर्त्ता और विदेशी पूंजी में साँठगाँठ

केवल समाचार–पत्र पढ़कर यह बात ध्यान में नहीं आती। ऐसें अंडरहैण्ड डीलिंग्स (अंधे सौदे) होते हैं कि पता नहीं चलता। जब राज्यकर्त्ता और विदेशी पूंजी में साँठगाँठ होती है तो जनता को अंधेरे में रखकर होती है, जनता के हित या विकास के लिए नहीं। और विदेशी पूंजी लगाने वालों का यह भी प्रयत्न रहता है कि वे ही लोग पुनः सत्ता में आने चाहिए, अन्यथा उनका सारा खेल ही खत्म हो जायेगा। राज्यकर्त्ता और विदेशी पूँजी में साँठगाँठ होने पर क्या–क्या होता है, इसका एक और उदाहरण देता हूँ :

आपने फिलिप्पीन के मार्कोस का नाम सुना होगा। वह भ्रष्टाचारियों का सम्राट था। मार्कोस ने लोगों की देशभक्ति का आह्वान किया। उसने कहा कि 'हमारा देश सामरिक दृष्टि से पिछड़ा रहे, यह अच्छा नहीं। अपने देश में हम पारमाण्विक संयन्त्र (न्यूक्लियर प्लाण्ट) लगायेंगे।' समाचारपत्रों ने इसका स्वागत किया। राष्ट्रपति मार्कोस ने नाभिकीय संयंत्र लगाने के

नाम पर 2 बिलियन डॉलर का विदेशी कर्ज लिया। संयंत्र के निर्माण का समय आया तो निविदाएँ आमंत्रित की गयीं; किन्तु बुलाया उन्हीं को जो मार्कोस के अपने लोग थे। फिर 85 मिलियन डॉलर का चैक ठेकेदार की जेब में से मार्कोस की जेब में आ गया, फलस्वरूप नाभिकीय संयंत्र का निर्माण हुआ ही नहीं और प्रतिदिन 3 लाख 55 हज़ार डॉलर का ब्याज इस राशि पर फिलीपीन्स को अदा करना पड़ा।

बाद में जब मार्कोस को हटाया गया और एक्विनो आयीं तो उन्होनें वैज्ञानिकों को बुलाकर संयंत्र के बारे में विचार–विमर्श किया। वैज्ञानिकों ने कहा कि यह भूचालबहुल क्षेत्र है। यहाँ इस प्रकार के संयंत्र लगाने का कोई औचित्य ही नहीं है। वैज्ञानिकों की इस राय के बाद एक्विनो ने संयंत्र लगाने का कोई औचित्य ही नहीं है। वैज्ञानिकों की इस राय के बाद एक्विनो ने संयंत्र लगाने का विचार तो त्याग ही दिया, साथ ही कर्जदाता देश से स्पष्ट कह दिया कि हम कोई कर्ज या ब्याज अदा नहीं करेंगे। यह कर्ज मार्कोस ने लिया था। इसका एक पैसा विकास पर खर्च नहीं हुआ। इसीलिए इसे मार्कोस–परिवार से ही वसूला जाए।

आज यही हाल हमारे देश का भी है। विदेशी कर्ज का बहुत भाग खर्च हो रहा है। इसमें से देश के विकास पर कितना खर्च हो रहा है ये देखने का समय है। यह अद्ध–सत्य, असत्य से भी ज्यादा खतरनाक है। इसका अनुभव अनेक स्थानों पर हमें आ सकता है।

इसी प्रकार का एक और उदाहरण देता हूँ। खाड़ी युद्ध (गल्फ वार) के समय अमेरिकी सरकार का अभिनन्दन हमारे यहाँ के समाचारपत्रों ने भी किया था। क्यों ? क्योंकि उन्होनें 113 अरब डॉलर का कर्जा माफ किया था। अब यह एक डिप्लोमेटिक हिस्ट्री (कूटनीतिक कहानी) है, ऐसा कहा गया था। अमेरिका चाहता था कि इराक के राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन के विरूद्ध सारे अरब देश उसके पक्ष में हो, सऊदी अरब और मिश्र आदि देश सद्दाम का साथ न दें, यही थी अरब देशों का कर्जा माफ करने में

अमेरिका की चाल। इसीलिए अमेरिका ने 113 अरब डॉलर का कर्जा अरब देशों का माफ कर दिया और इसीलिए मिश्र की सेना अमेरिका के नेतृत्व वाली संयुक्त सेनाओं में शामिल थी। लोगों ने समाचारपत्रों में इन दोनों ही बातों को पढ़ा था; लेकिन दोनों ही बातों का परस्पर सम्बन्ध है, यह समाचारपत्र नहीं बताते।

विदेशी कर्ज की मृग–मरीचिका

इतना गलत प्रचार होता है, जैसे–हमारे वित्त मंत्री विदेशों से पाँच हज़ार करोड़ डॉलर का कर्ज ले आते हैं, सर्वसाधारण जनता यह समझती है कि अब इस धन से हमारे देश का पर्याप्त आर्थिक और औद्योगिक विकास होगा। लेकिन जनता यह नहीं जान पाती कि इनकी कुछ शर्तें भी रहती है। इसमें उसी आईटम पर पहले जो कर्ज लिया था, उस कर्ज की जो किश्तें देनी होंगी और जो ब्याज बकाया होगा वह काट लिया जाता है। यदि मान लिया जाए कि पहले के ऋण की किश्तें और उस पर ब्याज की राशि सब 3500 करोड़ डॉलर होते होंगे तो उतने तो पहले ही काट लिये गए, शेष रहे 1500 करोड़ डॉलर। लेकिन वह राशि भी मिलने में कठिनाई यह आती है, क्योंकि इस राशि के साथ वहां की आउट ऑफ डेट मशीनरी भेजने की शर्तें ऋण–समझौते में सम्मलित होती हैं। अर्थात् शेष बचे 1500 करोड़ डॉलर में विकासशील देश के मत्थे, वह बेकार हो रही मशीनरी मढ़ी जाती है। यह नहीं देखा जाता कि उस देश के लिए ऐसी मशीनरी की उपयोगिता है भी या नहीं।

विदेशी सहयोग सम्बन्धी समझौते

अब, विदेशी सहयोग सम्बन्धी समझौते होते हैं। विदेशी सहायता आ जाती है। अब लोग कहते हैं कि इसमें खराबी क्या है ? विदेशी निवेश किस देश में नहीं हैं ? विदेशी सहयोग सम्बन्धी समझौते किस देश में नहीं हैं ? कैपिटिलिस्टों के अन्तर्गत चलने वाले प्रेस भी यही बात कहते हैं कि यह तो सारी दुनिया में ही चलताहै। ये लोग कह रहे हैं कि हम को कुछ

नहीं चाहिए लेकिन वे यह नहीं बताते कि बात की वास्तविकता क्या है ? यह ठीक है कि विकसित देशों में भी फॉरेन कॉलेब्रेशन है। जैसे इटली, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी और अमेरिका में भी। **अमेरिका के बारे में एक बात बता दूं कि अमेरिका आज जो नम्बर एक देश दुनिया में माना जाने लगा है, 20 साल तक ऐसी स्थिति नहीं रहेगी। पहले ही वह नीचे की ओर जाना शुरू हो चुका है। हमारे लिए मुश्किल यह है कि वह तो नीचे चला जाएगा, तब तक हमें बर्बाद करके छोड़ेगा। हमारे लिए यही संकट है।**

अमेरिका में भी आज विदेशी निवेश है और विदेशी सहयोग सम्बन्धी समझौते है। लोग कहते है कि यदि विकसित देशों के लिए वह ठीक है तो हमारे लिए क्यों नहीं ? हमारा कहना है कि हमारे लिए भी ठीक है। जैसा वहां है, यहां भी वैसा हो। यह फर्क समाचारपत्र नहीं बतायेंगे, कि वहां क्या है, और यहां क्या नहीं है ? वहां विकसित देशों में जो विदेशी निवेश आता है, विदेशों से समझौते होते है, वे यजमान देश की इच्छा के अनुरूप होता है। यहां जो कुछ होता है वह अतिथि देश की इच्छा के अनुरूप होता है।

यह ठीक है कि वार्तालाप होती है। वार्तालाप में कुछ लेन–देन अवश्य होता है। परन्तु ऐसा नहीं कि निवेश करने वाले देश को तो सब कुछ मिले और जहां निवेश करना है वह देश बर्बाद हो जाए ! ऐसा नहीं है। यजमान देश अपने राष्ट्रीय स्वार्थ की फिक्र रखते हुए लेन–देन का विचार करता है। यह समानता के आधार पर वार्तालाप होता है। हमारे यहां का एक भी वार्तालाप समानता के आधार पर नहीं है। हमारे सारे वार्तालाप आत्मसमर्पण करने वाले है। लेकिन कहा जाता है कि यदि हमने आत्मसमर्पण किया होता तो वे बहुत पैसा काहे के लिए देते। क्या वे राजा कर्ण हैं जो बहुत पैसा देने के लिए तैयार हो गए, लोगों पर उपकार करने के लिए उतारू हो गए। बाहर पैसा और टेक्नोलोजी देना उनके लिए भी आवश्यक है। उनको जिन्दा रहने के लिए भी आवश्यक है कि उनका पैसा

कहीं न कहीं निवेश होना चाहिए। और बातचीत करने के लिए जाने वाले हमारे नेता और सैक्रेटरी यदि नेशनल सैल्फ इंटरैस्ट रखते तो चाहे हमारी 100 में से 100 शर्तें न मान ली जातीं, लेकिन लेन–देन में हमारा नैशनल सैल्फ इंटरैस्ट तो बच जाता। आज जो हम पूरी तरह से आत्मसमर्पण करते हैं और आर्थिक गुलामी में जा रहे हैं, यह हालत न आती।

राष्ट्रीय बचत की आवश्यकता

विदेशी पूंजी नहीं आएगी तो हम अपने ही भरोसे कुछ कर सकते हैं क्या ? आपको आश्चर्य होगा, हम अपने भरोसे कुछ कर सकते हैं इसका प्रयोग कभी किया ही नहीं। ठीक है कि सारा काम हम अपने भरोसे न कर सकें, लेकिन लोगों में यदि राष्ट्रभक्ति की भावना जागृत रही जैसे जर्मनी और जापान में है तो राष्ट्रभक्ति की भावना के कारण हम तरक्की कर सकते हैं। पर इसका अन्दाजा कभी सरकार ने लिया है क्या ? पूंजी निर्माण के लिए बचत एक बहुत बड़ा तत्व है। देशभक्ति की भावना तो खत्म हुई। 1947 के बाद किसी के ऊपर देश को खड़ा करने की जिम्मेवारी नहीं, सिवाय अपना स्वार्थ सिद्ध करने के। उपभोगवाद इधर आ गया। जर्मनी, जापान में उपभोगवाद बहुत कम है, वे विकसित देश है। लेकिन हमारे जैसे उपभोगवाद वहां नहीं है। उपभोगवादी न होने के कारण बचतें बहुत है। देश के लिए बचतें करना है, देश के पूंजी निर्माण के लिए बचतें करना है। यह प्रवृत्ति भी उन लोगो में हैं, उसके कारण राष्ट्रीय बचतों के आधार पर ही बहुत सा काम वह कर सकते हैं। मैं यह बताता हूं कि हमारे देश में बचतें बहुत बड़ी मात्रा में हो सकती थी। यदि हमने लोगों की उस दिशा में देशभक्ति जगाई होती। देशभक्ति का आवाहन न होने के कारण उपभोगवाद बढ़ गया, बचतें नहीं हो सकीं। यह एक बात थी। और दूसरी बात उनकी जो पूंजी आ रही है वह समानता के आधार पर नही, उनकी शर्तों पर आ रही है। उसके कारण हम पर थोंपने की उनकी ताकत क्रमशः बढ़ती गई। आज हम आर्थिक गुलामी में आ गए हैं।

विदेशी टेक्नोलोजी

टेक्नोलोजी आयात की त्रासदी

हमारे प्रधानमंत्री ने कहा था कि इक्कीसवीं सदी का स्वागत करने के लिए हम 'अप–टू–डेट' साइन्स और टेक्नोलोजी (अद्यतन विज्ञान और प्रविधि) का आयात करेंगे। किन्तु साइन्स और टेक्नोलोजी कभी स्थायी रूप से अप–टू–डेट होती नहीं। उसमें तो निरन्तर प्रगति होती रहती है। परन्तु वे कह रहे हैं कि "अप–टू–डेट" टेक्नोलोजी ला रहे हैं, अब, कोई भी सरकारी नेता यह बताए कि 45 साल में हमने कौन सी अप–टू–डेट टेक्नोलोजी ली है। विदेशों में ऐसी परिस्थिति है कि तकनीक प्रयोग चलते रहते है। होता यह है कि एक वस्तु के निर्माण करने के लिए आज जो तकनीक है वह 5–6 महीने में "आउट डेटेड" (प्रयोग से बाहर) हो जाती है। नई तकनीक का निर्माण होता है। लेकिन पुरानी तकनीक की मशीनरी, जो उनके गोदाम में पड़ी है, ऐसी पुरानी तकनीक वे हमारे देश पर लाद देते है। क्या हमारी सरकार यह बता सकती है कि पिछले सालों में जो तकनीक हमने ली है, देश को हर हाल मे उसकी ज़रूरत थी ? यह आश्चर्य की बात है कि हमारी सरकार नई के नाम पर जो मशीनरी आयात करती है वह 40 प्रतिशत से 60 प्रतिशत तक काम में ली जा चुकी होती है। अपनी मशीनरी को बेचना था, इसीलिए बेचा जबकि हमारे राजनेताओं ने मजबूरीवश उसे स्वीकार किया और हमें बताते हैं कि यह आधुनिक तकनीक है।

परन्तु यह कहानी यही पर खत्म नहीं होती है, वास्तव में वह पुरानी मशीनरी यहाँ आ जाने पर भी, उसका पूरा लाभ हम नहीं उठा पाते क्योंकि उसका पूरा उपयोग करने के लिए जिस स्तर का विकास, माने इन्फ्रास्ट्रक्चर हमारे यहाँ अपेक्षित है, वह तो है नहीं। अतः लगभग 60–70 प्रतिशत भी उसका उपयोग नहीं हो पाता। वे यंत्र हमारे लिए सफेद हाथी माने, लाईबिलिटी हो जाते हैं।

हमारा कल्याण उनका हेतु नहीं

वास्तव में, हमारा कल्याण करना उनका उद्येश्य नहीं है। हम जहाँ–जहाँ चाहते हैं, वहां वे हमें साइन्स और टेक्नोलोजी नहीं देंगे। हम चाहते हैं उनकी टेक्नोलोजी डिफेन्स (सुरक्षा) में। हम तकन्नीक चाहेंगे जहाँ एक्सपोर्ट (निर्यात) के उद्योग हैं। परन्तु वहाँ वे देंगे नहीं। हम जहाँ नहीं चाहते, वहाँ वे देते हैं। वे कंज्यूमर गुड्स, माने उपभोक्ता–सामग्री के क्षेत्र में घुसते हैं, उपभोक्ताओं के बाजार में आते हैं, जो हमारे हित में नहीं है। जिन क्षेत्रों में उनकी उच्च तकनीकी हमारे लिए परम घातक है, उसी क्षेत्र में वे ला रहे हैं और वह क्षेत्र है – उपभोक्ताओं वस्तुओं का क्षेत्र। क्या हमारे देश में हम, टूथपेस्ट, टूथब्रश नहीं पैदा कर सकते, उपभोक्ताओं वस्तुओं का जो क्षेत्र है, वह तो पूर्णरूपेण हमारे लिए खुला रहना चाहिए। जहां हमें टेक्नोलोजी की आवश्यकता है, वहां वह करेंगे नहीं।

टेक्नोलोजी अकेली नहीं आती

नई तकनीक के बारे में यह स्पष्ट है कि वह अकेली नहीं आती बल्कि पाश्चात्य सभ्यताएं भी आती है। हमारे देश के लोग यह समझते हैं कि हमारी परम्पराएं और संस्कृति तो अपनी ही रहें, जबकि नई तकनीक बाहर से लाई जाए। लेकिन ऐसा नहीं हो सकता। नई सभ्यता के साथ आने वाली तकनीक से जितना हमारा पुराना ढांचा है वह सब नष्ट हो जाएगा। दूसरी बात उनकी सारी तकनीक लोगों को बेरोजगार करने वाली है। यह सम्भव है कि कुछ क्षेत्र हमारी अर्थव्यवस्था के ऐसे हैं जहां उच्च तकनीक की आवश्यकता है। खासकर देश की सुरक्षा के लिए। लेकिन ज्यादातर क्षेत्र ऐसे है जहां उच्च तकनीक की आवश्यकता नहीं है और वहीं वे उच्च तकनीक लाना चाहते हैं। जबकि इसके विपरीत हाल यह है कि जहां हमको उच्च तकनीक चाहिए, वहां वे देने वाले नहीं है।

पिछले दिनों प्रधानमंत्री ने कहा कि नई तकनीक के कारण जिन मजदूरों की छंटनी हो रही है, उनको हम नई तकनीक का प्रशिक्षण देने

की व्यवस्था करेंगे। लेकिन यह वास्तविकता नहीं है। अमरीका में भी पहले यही कहा गया था। लेकिन वहां का अनुभव यह बताता है कि पुनः प्रशिक्षण के लिए जिस न्यूनतम शैक्षिक योग्यता की आवश्यकता होती है वह इस श्रेणी के मजदूरों में नहीं मिलती। इस वजह से अमेरिका में आर्थिक असंतोष बढ़ गया। यह सारी बात प्रधानमंत्री को बताने का काम सचिवों का है। लगता है कि उनको बताया नहीं गया।

राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी–नीति की आवश्कता

एक बहुत बड़ी भ्रांति हमारे देश में फैलाई गई है कि विदेशी तकनीक के बिना हम प्रगति नहीं कर सकते। यह पूर्ण सत्य नहीं है। आम आदमी भी समझता है कि स्वदेशी के नाम पर यदि हम विदेशी तकनीक का विरोध करेंगे तो यह निश्चित रूप से देश को पीछे छोड़ने वाली बात होगी। इसके विषय में शास्त्रोक्त कदम होना चाहिए कि हम राष्ट्रीय तकनीक की नीति विकसित करें। उसके अंतर्गत चार बातें आनी चाहिए :

1. हमारे प्रौद्योगिकीविद् (टेक्नोलोजिस्ट) दुनियाभर की टेक्नोलोजी का अध्ययन करें और उनमें से यह निर्णय किया जाए कि कहीं की भी प्रौद्योगिकी का कौन सा भाग ऐसा है जिसे ज्यों का त्यों अपना लेना राष्ट्रीय हित में होगा–जिसे कहा जाता है आत्मसात् (एडॉप्ट) करना।
2. कौन सा भाग ऐसा है जिसमें कुछ संशोधन करके लिया जा सकता है–जिसे रूपान्तरण (मोडिफिकेशन) कहा जाता है।
3. कौन सा भाग ऐसा है जिसे अस्वीकार (रिजेक्ट) करना होगा। हमारी समस्या बेरोजगारी की है और उनकी समस्याएं उत्पादन (प्रोडक्शन) से सम्बन्धित। अतः हमारे देश के लिए जो अनुकूल नहीं है और जिसे अस्वीकार कर देना ही उचित है, ऐसे भागों की पहचान करना।

4. कौन से क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ उनकी टेक्नोलोजी उपलब्ध नहीं है। उसमें हमें अपनी प्रौद्यागिकी विकसित करनी होगी, जैसे–हमारा हस्तशिल्प उद्योग (हैण्डीक्राफ्ट्स)।

इन चार बातों का विश्लेषणात्मक विचार होना चाहिए और इसी आधार पर राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी–नीति विकसित की जानी चाहिए। लेकिन हम जानते हैं आज की सरकार इन सब पर विचार नहीं करेगी।

उपयुक्त तकनीक की पहचान

सरकार यह जो प्रचार कर रही है कि पश्चिमी देशों की समस्त प्रौद्योगिकी अच्छी ही है, वह गलत है। पश्चिमी देशों के लिए तो उनके विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास ही प्रगति है। किन्तु आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि उनके विज्ञान और उनकी प्रौद्योगिकी का विकास प्रगति है या नहीं, इस विषय में वहाँ के वैज्ञानिकों के मनों में संदेह है। उदाहरण देखिए जेनेटिक्स का, जिसे अपने यहाँ प्रजनन शास्त्र कहते है। उन्होनें घोषणा की थी कि उनका शास्त्र 2040 ई. तक मनचाहे आकार–प्रकार, रंग–रूप, ऊँचाई–चौड़ाई वाले मनुष्य का निर्माण करने में सफलता प्राप्त कर लेगा। जेनेटिक्स की सबसे बड़ी प्रयोगशाला (लेबोरेट्री) सिएटल में है। जुलाई 1979 में उस प्रयोगशाला में किये जा रहे प्रयोगों में एक स्थिति ऐसी आयी कि एक नये जीव के निर्माण की सम्भावना दिखने लगी। ऐसी स्थिति में म्यूनिसिपल कार्पोरेशन (नगर–निगम) की अनुमति लेनी पड़ती है। वैज्ञानिकों के द्वारा अनुमति माँगी जाने पर कार्पोरेशन ने यह पूछा कि इसकी निर्मिति के परिणाम क्या होंगे ? उन्होनें कहा–यह बताना कठिन है, हो सकता है बिल्कुल निरूपयोगी हो और यह भी हो सकता है कि विश्व की एक–तिहाई जनसंख्या के विनाश का कारण बने।

कार्पोरेशन ने अनुमति नहीं दी। उन्होनें कहा कि जब आप ही ऐसी संभावना बता रहे हैं तो हमे कैसे जोखिम उठा सकते हैं ? वैज्ञानिकों

द्वारा प्रयोगशाला की दीवारें 'फूल प्रूफ' करने का आश्वासन देने पर कार्पोरेशन ने कहा कि आप प्रयोगशाला में जीवित रहेंगे, इसकी क्या गारण्टी है ? अनुमति नहीं दी गयी। फलस्वरूप कार्पोरेशन के विज्ञान–विरोधी होने का प्रचार किया गया।

दूसरे भी उदाहरण हैं। परन्तु, हम विचार करें कि पश्चिमी देशों में भी नई तकनीक का लाभ हुआ है क्या ? अणुबम के निर्माण को लेकर आइंस्टीन रोने लगे। रोबर्ट औपन हाई मैन ने कहा कि गलती हुई है–यह नया अनुसंधान करना ही नहीं चाहिए था। राजनेताओं के हाथ में जाने के बाद नागाशाकी और हिरोशिमा का विनाश हुआ। दोनों वैज्ञानिक रोने लगे। आज तो परमाणुबमों के कारण विश्व विनाश के कगार पर खड़ा हुआ है यह सारा तकनीक का परिणाम है।

कौन सी तकनीक उपयुक्त है, कौन सी नहीं ? विनाशकारी कौन–सी है, संवर्धक कौन–सी है, इसका विचार होना चाहिए। कम्प्यूटर तकनीक के जनक सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. विन्नेर भी कहते हैं कि विज्ञान और तकनीक की अनियंत्रित प्रगति होगी तो मनुष्य को लाभ ही होगा, इसकी गारण्टी क्या है ? उन्होनें कहा कि तकनीक पर नियंत्रण रखने वाली संस्था होनी चाहिए जो वैज्ञानिकों और तकनीक के जानकारों की न हो बल्कि सांस्कृतिक प्रवृत्ति के मानवजाति का कल्याण चाहने वाले जो लोग हैं उनकी नियंत्रित संस्थाएं होनी चाहिए।

विश्व व्यापार संगठन

वैसे तो दुनिया में हमेशा परिवर्तन चलता रहता है। विविध देशों में विविध उथल–पुथल चलती रहती है, किन्तु विश्व के इतिहास को मोड़ देने वाली घटनाएं विविध बहुत कम रहती है। ऐसे चलता ही रहता है, युद्ध चलता रहता है, क्रांति चलती रहती है, सत्तातरण चलता रहता है, किन्तु विश्व के इतिहास को मोड़ देने वाली घटनाएं कभी–कभी होती है।

विश्व को प्रभावित करने वाली दो घटनाएँ

पिछले साठ साल में, ऐसी दो घटनाएं हुई हैं। 6 जून 1945 को जनरल आइसन हावर ने मित्र राष्ट्रो की सेना को यूरोप के कॉन्टीनेन्ट पर उतारा फ्रांस में। वह एक दिन ऐसा था, जो विश्व के इतिहास को मोड़ देने वाला था और दूसरा दिन 13 दिसम्बर 1996 को सिंगापुर में विश्व व्यापार संगठन के अन्तर्राष्ट्रीय अधीवेशन में जो कुछ हुआ वह दिन विश्व के इतिहास को नया मोड़ देने वाला था, पहली घटना जब हुई तो दूसरा महायुद्ध समाप्त हुआ। मित्र राष्ट्रों की विजय हुई, किन्तु उनके ध्यान में आया कि अब तक जो उनका साम्राज्य दुनिया भर में चल रहा था, वैसा साम्राज्य चलाना अब सम्भव नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का ऐसा दबाव था, कि अपने उपनिवेशों को स्वराज्य देना उनके लिए बाध्य हो गया था। सभी को स्वराज्य मिला, भारत बड़ा देश है उसको भी मिला, सिंगापुर छोटे से छोटा उसको भी मिला, सभी देशों को स्वतंत्र करना उनके लिए बाध्य था, अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के दबाव के कारण।

शोषण की पुरानी पद्धति समाप्त – नयी पद्धति की तैयारी

किन्तु यह एक बड़ा संकट भी था उनके लिए, पहले दुनिया भर में उनका एक ऐसा रूबाब था कि यह देश बड़े समृद्ध हैं, किन्तु वास्तव में उनकी समृद्धि अपने पैरों पर नहीं थी, उपनिवेश का शोषण करते हुए वह

समृद्ध थे, अब उनके सामने एक दम प्रश्न आया, कि अपने उपनिवेशों को हम यदि स्वराज्य देते हैं, स्वराज्य देने के बाद शोषण कैसे करेंगे, और शोषण यदि बन्द हो जाता है तो फिर हमारी अर्थव्यवस्था चरमराने लगेगी। माने परिस्थिति ऐसी थी, कि उनकी ही अर्थव्यवस्था चरमराने लगती यदि वो दूसरे देशों का शोषण बन्द हो जाता, लेकिन कैसे शोषण कौन करने देगा? जो नवस्वतंत्र देश हैं, वहां के स्वाभीमानी लोग यह पसन्द नहीं करेंगे, कि स्वराज्य प्राप्ति के बाद भी और कोई उनके देश का शोषण करें। उनके जो एक्सपर्टस् थे, उन्होनें तभी से योजना बनाना शुरू किया, (स्ट्रेटर्जी) रणनीती बनाना शुरू किया। यह सोच लिया कि बगैर शोषण के हम जिन्दा नहीं रह सकते, किन्तु शोषण करने के लिए कौन तैयार होगा, शोषण होने देने के लिए। तो उन्होनें स्ट्रेटर्जी बनाई।

स्ट्रेटर्जी क्या बनाई कि यह जो सारे नवस्वतंत्र देश है। अब एक टरमिनोलोजी आप ध्यान में रखिए, नवस्वतंत्र देश, तृतीय विश्व के देश, विकसनशील देश और दक्षिण देश ये सब एक ही देश हैं। अब यह जो पूर्व साम्राज्यवादी गोरे देश थे, दुनिया का नक्शा ऐसा है, एटलस, कि सारे पूर्व साम्राज्यवादी गोरे देश उत्तर में आते हैं, और सारे गैर गोरे देश जो विकसनशील, दक्षिणी, नवस्वतंत्र, तृतीय विश्व के वो सारे दक्षिण में आते हैं, इसीलिए यह भी टरमीनोलोजी चलती है कि दक्षिणी देश माने पुराने उपनिवेश, उत्तरी देश माने पूर्व साम्राज्यवादी गोरे देश, और उनका नेतृत्व उस समय अमेरिका की तरफ था, दूसरे महायुद्ध के पश्चात् अमेरिका एकदम दुनिया का नेता माना गया, क्योंकि सबसे कम हानि युद्धमान देशों में अमेरिका की हुई थी, बाकी सब देशों की भूमि पर लड़ाई लड़ी गई थी, अमेरिका दूर थी इसीलिए अमेरिका की जमीन पर लड़ाई नहीं लड़ी गई, इसीलिए सबसे कम हानि उनकी हुई थी और फिर उनकी अर्थव्यवस्था सबसे अच्छी थी, उनको दुनिया का नेता माना गया।

अब दो तरफ, दो बाते हुई। सबका शोषण कैसे करना है, इसीलिए रणनीति यह बनाएंगे, कि सभी नवस्वतंत्र देशों में अमेरिका के लिए

उपयुक्त, मैं अमेरिका शब्द का प्रयोग कर रहा हूं, **यह माने सभी गोरे देशों के लिए, उपयुक्त अनुकूल ऐसे लोगों को सरकार में लाना। राज्यकर्ता इन देशों के ऐसे ही हो, जो अमेरिका के लिए अनुकूल होंगे और स्वाभाविक रूप से यदि ऐसे लोग नहीं आ सकते तो खून खराबा करते हुए भी अमेरिका के लिए अनूकूल लोगों को लाना जैसे चिली में सल्वेडोर अलेण्डी का खून किया गया तो राज्यकर्ता अपने अनूकूल रहे यह पहली बात।** रणनीति का दूसरा हिस्सा यह था कि इन सभी देशों के लोगों को अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक घटनाओं के बारे में पूरी तरह अंधेरे में रखना। टी.वी. है, रेडियो है, समाचार पत्र है, बड़ी–बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय घटनाएं जो हैं, उनके बारे में अंधेरे में रखना फिर तीसरा था कि यह जो अपने लिए अनूकूल राज्यकर्त्ता लाए गए, जनता को पता न लगते हुए, उनके पार्लीयामेन्ट को पता न लगते हुए, उनके साथ गोरे देशों के लिए अनूकूल ऐसे समझौते करना। फिर यह समझौते जैसे के जैसे प्रकाशित नही करना, उसमें से जो हिस्सा अच्छा होगा, मीठा–मीठा, गब–गब, तो उतना ही प्रकाशित करना, पूरा प्रकाशित नही करना, ताकि एकदम विरोध नहीं होता और जब अमल करना शुरू होता है, फिर लोगों को पता चलता है कि यह तो बड़ा घातक समझौता हुआ किन्तु समय पर क्या करना, सब लोग कन्फ्यूज़ हो जाते हैं, लगता है कि आकाश से कुल्हाड़ी गिर गई, अब क्या करना, फिर कोई प्रतिकार नहीं कर सकेगा, अपना काम हो जाएगा। यह उनकी रणनीति थी। अब उसके अनुसार वह चले, सभी देशों में चले, अपने देशों में भी चले।

विकसित देशों की स्थिति खतरे में

अब उधर दूसरी बात थी, अमेरिका दूसरे महायुद्ध के पश्चात् दुनिया का नेता बन गया यहां तक तो ठीक है, किन्तु इसके कारण उसके लोगों में एक हर्षोन्माद निर्माण हुआ। अंग्रेजी में कहते हैं – 'यूफोरिया', युफोरिया माने हर्षोन्माद। क्या अब हम ही है, हम दुनिया के नेता हैं, जब तक आसमान में चांद, सूरज हैं हम ही दुनिया के नेता रहेंगे। जैसा राज्यकर्त्ता के मन में हमेशा रहता है क्या अब हम पॉवर में है, तो जब तक

आसमान में चांद सूरज हैं, हम ही पॉवर में रहेंगे, ऐसी भ्रांति अमेरिका के लोगों के मन में थी। तो उन लोगों को लगा कि हम अखण्ड समृद्धिमान रहेंगे, तो वो भौतिकतावादी (मेटीरयलीस्टीक) होने के कारण उपभोगवादी थे (कंज्यूमरिस्ट) कंज्यूमरिज़म ये कोई ईज़्म नहीं हैं, जबसे धरती पर जीवन निर्माण हुआ तबसे कंज्यूमरिज़म निर्माण हुआ, छोटे से छोटा प्राणी भी कंज्यूमरिस्ट ही होता है, ज्यादा गर्म हुआ तो वो ठण्डे प्रदेश में आता है, ज्यादा ठण्डा हुआ तो वो गर्म प्रदेश में जाता है। तो कंज्यूमरिज़म, उपभोगवाद यह सृष्टि के प्रारम्भ से है, तो उपभोगवाद बहुत बढ़ गया, **अब केपिटलिज़म का, उपभोगवाद का एक अन्तरविरोध यह है कि दुनिया में उपभोग के साधन सीमित है, सभी सम्पूर्ण दुनिया में उपभोग के साधन सीमित हैं, और मनुष्य की उपभोग की इच्छाएं असीम है, अमार्यादित है, तो उपभोग की इच्छाएं अमार्यादित, उपभोग के साधन सीमित, यह अन्तरविरोध केपिटलिज़्म में, कंज्यूमरिज़म में है।** अमेरिका में यही हुआ, उपभोग की इच्छाएं बढ़ती गई, शुरू–शुरू में 10–15 साल कुछ लगा नहीं, लेकिन उपभोग के साधन सीमित थे, और फिर दुनिया के नेता के नाते जो उनका स्थान था, वह भी खतरे में आने लगा।

गैट, डब्ल्यू.टी.ओ. – व्यापारिक आधिपत्य हेतु बढ़ता दायरा

तो उन्होनें पहले से जो योजनाएं बनाई, उसमें से एक योजना यह थी, कि 1948 ही में उन्होनें एक संस्था बनाई, "जनरल एग्रीमेन्ट ऑन ट्रेड एण्ड टैरिफ", गैट, इसका उद्देश्य क्या बताया, उद्देश्य बताया कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वस्तुओं का व्यापार ठीक चले, सबके लिए अनूकूल चले, व्यवस्थित चले, इसीलिए हम यह संस्था बना रहे हैं। अब उसमें एक ही एजेण्डा रखा कि वस्तुओं का व्यापार, "इन्टरनेशनल ट्रेड ऑफ गुड्स" गुड्स यानि वस्तु, उस समय सभी वस्तुओं में अमेरिका आगे था। तो इसमें लाभ अमेरिका को होगा, बाद में ऐसा हुआ कि कई चीजों में अमेरिका पिछड़ गया। जापान आदि कुछ देश आगे बढ़ गए, केवल गुड्स यानि वस्तुओं के आधार पर अमेरिका को अपना स्टेट्स कायम रखना कठिन हो

गया। तो गैट के इसमें 1986 में ऊरूग्वे राऊण्ड में उन्होनें कहा कि भई और चार आईटम्स गैट के टेबल में आने चाहिए। मैं डीटेल में नहीं जाना चाहिए, ट्रिप्स है, ट्रिम्स है, गुड्स है, सर्विसेज़ है, कई ऐसे चार आईटम्स् उन्होनें गुड्स के साथ – ट्रिप्स, ट्रिम्स, सर्विसेज़, एग्रीकल्चर चार आईटम्स और लाने के लिए कहा, तो गैट में जो विकसनशील देश थे, उन्होनें कहा कि अरे भई ये तो ओरीजनल यह नहीं था, केवल गुड्स के बारे में था, उन्होनें कहा नहीं – नहीं हम किसी कि मानेंगे ही नहीं यह चार आईटम्स आने ही चाहिए दादागीरी करके उन्होनें वह आईटम्स लाए। बाद में उनके यह ख्याल में आया कि इससे भी अमेरिका अपने को बचा नहीं सकती, तो इसीलिए और भी आईट्म्स लाने का प्रयास उनका चल रहा है। इसी में से डंकल आपने सुना होगा, फिर बाकी बाते हुई।

अमर्यादित उपभोगवाद से खतरे में आए गोरे देश

उधर 1972 तक किसी भी पॉलीटीकल लीडर की हिम्मत, अमेरिका में नहीं थी यह बताने की, वास्तविकता क्या है ? कि भई उपभोगवाद के कारण हमारा देश नीचे जा रहा है, यह सीधा बताना पॉलीटीकल लीडर के लिए कठिन था क्योंकि जो पॉलीटीकल पार्टी और पॉलीटीकल लीडर कहेगा, कि भई उपभोगवाद कम करो, नही तो हमारी अर्थव्यवस्था टूट जाएगी, लोग नाराज़ हो जाएंगे, इसीलिए किसी ने हिम्मत नहीं की, **अपने पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने जैसे फॉर्मूला दिया, मैक्सीमम प्रोडक्शन, इक्वीटेबल डिस्ट्रीब्यूशन, रिस्ट्रीक्टेड कन्जम्पशन माने, अधिकतम उत्पादन, समानतर वितरण, कम से कम कंज़म्पशन माने उपभोग। ऐसा कहने की हिम्मत किसी की नहीं थी।**

अमेरिका के दोहरे मानदण्ड

1972 तक अमेरिका की अर्थव्यवस्था इतनी गिरी, कि अब छिपाना कठिन हो गया, तो 1973 में उन्होनें कानून बनाया, अर्थव्यवस्था को थोड़ा संवारने के लिए, लेकिन उसका भी उपयोग नहीं हुआ, तो 1988 में एक

नया बड़ा कानून बनाना पड़ा, ओमनिवस एक्ट बड़ा कानून बनाना पड़ा, अमेरिका की अर्थव्यवस्था को संवारने के लिए जिसमें, वो सुप्रसिद्ध दो क्लाजिस है, सुपर 301, स्पेशल 301 जिसके अन्तर्गत यह कहा गया है कि अमेरिका अपने देश में किसका माल आयात करने देना यह तय करने का अधिकार अमेरिका को रहेगा। किसी भी देश का माल आया, अमेरिका को ऐसा यदि लगा कि यह माल आने के कारण हमारे अमेरिकन उद्योगों को हानि पहूंचती है, तो उनको अधिकार है कि वह यह माल उतारने नहीं देंगे, किन्तु अमेरिका का माल किसी भी देश में यदि निर्यात होता है, तो सभी देशों के लिए बाध्य है कि उन्हें अमेरिका का माल उतारना ही चाहिए, लेना ही चाहिए, नहीं लेंगे तो उनको दुश्मन कहा जाएगा, उनके खिलाफ आर्थिक प्रतिबंध लगाया जाएगा, माने डबल स्टैण्डर्ड, अपने देश में कौन सा माल आने देना यह तय करने का अधिकार अमेरिका को है, यह किसी भी दूसरे देश का यह अधिकार नहीं है, अमेरिकन माल आता है वह लेना ही पड़ेगा, नहीं लेंगे तो हम प्रतिबन्ध लगायेंगे, यह धमकी, तो यह 1988 का ऑमनिवेस कानून उन्होनें पास किया। किन्तु उससे भी पोसीशन सुधरना कठिन था, तो अमेरिका धीरे–धीरे नीचे जा रही थी अब और भी उन्होनें कुछ तरकीबें लाई, वह सारा गहराई में जाकर बोलना आपके लिए बड़ा बोर हो जाएगा, किन्तु विषय ही टेक्नीकल है अब कोई चारा नहीं पोलीटीकल भाषण लच्छेदार हो सकता है, हम भी कर सकते है, किन्तु यह आर्थिक प्रश्नों को भाषण लच्छेदार नहीं हो सकता वो फैक्टस एण्ड फिगर्स वाला ही हो सकता है।

डब्ल्यू.टी.ओ. – आधिपत्य का साधन

तो फिर इन्होनें अपने साधन के रूप में एक संगठन निर्माण किया जिसका नाम है "विश्व व्यापार संगठन" वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन। अब यहां एक बात का मैं स्पष्टीकरण करूंगा, मैं जब अमेरिका, अमेरिका कहता हूं, तो कृप्या करके ऐसा मत समझिए कि मैं अमेरिकन जनता के विरोध में बोल रहा हूं, जनता के विरोध में नहीं बोल रहा हूं, अमेरिका के सर्वसाधारण लोग उतने ही सज्जन और इनोसेंट हैं जितने आप और हम।

मैं जब अमेरिका शब्द का प्रयोग करता हूं, उसका अर्थ है, कि सभी गोरे देश पूर्व साम्राज्यवादी सभी गोरे देश जिनको विकसित देश, डेवेलप्ड कन्ट्रीस् भी कहा जाता है, ऐसा डेवेल्पड कन्ट्रीस के राज्यकर्त्ता और डेवेल्पड कन्ट्रीस के पूंजीपति इनकी जो साँठगाँठ है, राज्यकर्ता और केपिटलिस्ट इनकी जो साठगाठ हैं, उसको हम कन्डेम कर रहे हैं। अमेरिका के यां बाकी गोरे देशों के सर्वसाधारण नागरिकों के खिलाफ हम नहीं है, उनको पता ही नहीं, उनका कोई कसूर ही नहीं, उनको भी मालूम नहीं कि यह ऊपर के लोग क्या बदमाशी कर रहे हैं, तो जब इतना हर समय बोलना तो कठिन है कि गोरे देशों के राज्यकर्त्ता और कोई पूंजीवादी संस्थाएं इनकी साठगाठ का हम विरोध करते है, हर समय बोलना कठिन है इसीलिए सुविधा के लिए हम अमेरिका शब्द का प्रयोग करते हैं, लेकिन उसका अर्थ यह होता है, अमेरिकन जनता से हमारा विरोध नहीं है।

तो इन लोगों ने यह विश्व व्यापार संगठन क्यों खड़ा किया? जब मैं विदेशी पूंजी कहता हूं, फोरेन केपिटल, तो उसमें आते हैं, वर्ल्ड बैंक, इंटरनेशनल मोनेट्री फण्ड, और बहुराष्ट्रीय कम्पनीयां (मल्टीनेशनल), अब ये शुरू में उनकी इच्छा थी कि तृतीय विश्व के देशों पर अपना कब्जा जमाएं, उनका शोषण करें। तो गैट के नेगोसिएशन टेबल पर सभी विकसनशील देश इनके ऊपर दादागीरी करते हुए गोरे देश अपने निर्णय थोपते थे।

न्यायपूर्ण व्यवस्था हेतु प्रयास

तो उस समय मलेशिया के प्रधानमंत्री महाथिर मोहम्मद, इन्होनें सोचा कि यह जो दादागीरी कर रहे हैं, इसका विरोध होना चाहिए, विरोध होना चाहिए तो यह जो गैर गोरे विकसनशील देश है, उनका इकट्ठा लड़ना चाहिए, तो यह जो शोषण का प्रयोग चल रहा है उसके बारे में अध्ययन होना चाहिए, रिसर्च होना चाहिए, तो इन्होनें भारत को कहा कि सबसे बड़े देश हम में से आप ही है। तो गैट के नेगोसिएशन में गोरे देशों का हम सब मिलकर विरोध करें आपके नेतृत्व में, भारत के नेतृत्व में।

भारत ने नेतृत्व करने से इन्कार किया, फिर महाथिर मोहम्मद ने दूसरी तरकीब निकाली, एक कमीशन स्थापित किया "साऊथ कमीशन" इन देशों के एक्सपर्टस को लेकर एक कमेटी बनाई, व उसको साऊथ कमीशन कहा। उसको काम दिया, क्या काम दिया, कि ये गोरे देशों का आर्थिक आक्रमण कैसे हो रहा है? उनके आर्थिक साम्राज्य कैसा आ रहा है? और उसको रोकने के लिए क्या कारगर उपाय हो सकते हैं? इसके लिए कमीशन बनाया। इस कमीशन की रिपोर्ट आई वह पब्लिश भी हुई, 'चेलेंज टू द साऊथ' यह रिपोर्ट का नाम है, आप कहीं भी मार्केट में ले सकते है 'चेलेंज टू द साऊथ'।

साऊथ कमीशन की रिपोर्ट

और उसका रिपोर्ट आप पढ़ेंगे तो स्वदेशी जागरण मंच आज जो बातें बोलता है, वही बातें उसमें है कि यह गोरे देश सबको आर्थिक गुलामी में डालना चाहते हैं, उसका विरोध करना चाहिए, उसके लिए उपाय क्या–क्या हो सकते हैं ? साऊथ–साऊथ कॉ–ऑपरेशन माने दक्षिणी देशों ने आपस में कॉ–ऑपरेशन करना वगैरह–वगैरह ऐसा एक रिपोर्ट पब्लिश हुआ। आप रिपोर्ट पढ़ेंगे तो आपको लगेगा यह स्वदेशी जागरण मंच के लोगों ने लिखा है। अब यह किसने लिखा था, यह जो साऊथ कमीशन था, उसके अध्यक्ष के नाते महाथिर मोहम्मद ने को अध्यक्ष रखा था, और जिनके वैचारिक नेतृत्व में तंजानिया के न्येरे को यह डॉक्यूमेन्ट तैयार हुआ, वो सेक्रेटरी जनरल डॉ. मनमोहन सिंह थे। आपको आश्चर्य होगा कि सारा जो डॉक्यूमेन्ट स्वदेशी जागरण मंच के विचारों के जैसा है, वो जिनके वैचारिक नेतृत्व में तैयार हुआ वह डॉ. मनमोहन सिंह थे।

पूर्ण विस्मरण माने एमनेशिया

लेकिन जैसे फाइनेन्स मिनीस्टर के नाते शपथ ली, तो अंग्रेजी में कहते है, एमनेशिया करके एक डीसीज़ होता है, एमनेशिया का मतलब होता है कि आदमी भूल ही जाता है, मैं कौन हूं, क्या हूं, कहां से आया,

कहां जाना है, मेरा नाम क्या है, सब भूल जाता है, सम्पूर्ण विस्मरण, तो जैसे ही फाइनेन्स मिनीस्टर बन गए, सम्पूर्ण विस्मरण, एमनेशिया हो गया। और रिपोर्ट में उन्होनें जो लिखा था, उसके विपरीत बोलना शुरू कर दिया। खैर, अब धीरे–धीरे लोगों में जागरण होना शुरू हुआ।

विरोध विश्वव्यापी हुआ

अब उनकी जो है रणनीति मैने बताई, उसमें सबसा बड़ा हिस्सा एक था, कि जो वो करना चाहते थे, वह तुरन्त हो जाए, क्योंकि तुरन्त न हुआ और लोग यदि सावधान हो गए तो फिर उसको अमल में लाना बड़ा कठिन होता है। इसीलिए जल्दबाजी करने की आवश्यकता थी। किन्तु भगवान की इच्छा थी कि वो वैसा पूरा कर नहीं सके। इधर चाईना ने पहले चाईना दबता था, धीरे–धीरे अपनी अर्थव्यवस्था अच्छी होने के बाद दबना बन्द किया, जापान पहले दबता था, उनकी अर्थव्यवस्था ठीक होने के बाद उन्होनें झुकना बन्द किया, यह मलेशिया वगैरह तो पहले से अपने को बचाने की कोशिश में थे, फिर यह हुआ कि अमेरिका इतनी तेजी से नीचे जा रहा था, कि केवल गैर–गोरे देशों का शोषण करने से ही उनकी भूख शान्त होने वाली नहीं थी।

यूरोप में जनविरोध

पहले अमेरिका और यूरोप के सारे देश एक गुट में थे, अभी भी हैं, लेकिन बिल्कुल एकजुट थे। जैसा अमेरिका कहेगी वो यूरोप के देश करेंगे, लेकिन अमेरिका को बचाने के लिए जैसे हम लोगों का शोषण करना आवश्यक उनके लिए था, यूरोप के देशों का भी शोषण करना आवश्यक हो गया। यूरोपीयन कॉम्यूनीटी के 12 देश थे, उनके साथ उन्होनें एक एग्रीमेन्ट किया – किसान और किसानी के बारे में। अब जैसे मैने कहा कि ऊपर के ऊपर एग्रीमेन्ट करते थे, वह पूरा पब्लिश नहीं करते थे, मीठा–मीठा, गब–गब इतना ही पब्लिश होता था, इसीलिए किसी ने विरोध नहीं किया। उसका क्रियान्वयन जब शुरू हुआ, अमल जब शुरू हुआ, तो

एकदम किसानों को लगा कि अरे यह तो हमारे ऊपर आकाश से कुल्हाड़ी गिर गई, उन्होनें विरोध किया और विरोध में आन्दोलन किया **यूरोप के किसानों ने, और आन्दोलन में जो उन्होनें मांग रखी जो दुनिया के इतिहास में पहली बार रखी गई थी, मांग रखी कि हमारे सरकारों ने जो हस्ताक्षर किए हैं समझौतो पर, वह हस्ताक्षर वापिस लेने चाहिए। मेरा ख्याल है दुनिया के इतिहास में ऐसी मांग कभी आई नहीं है कि हमारी सरकार ने समझौते पर जो हस्ताक्षर किए है, वह वापिस लेने चाहिए,** वापिस तो नहीं लिए लेकिन इस तरह की मांग दुनिया के इतिहास में पहली बार आई।

उत्तरी अमेरिकी देशों में जनविरोध

इतना ही नहीं, तो अमेरिका के लोगों का भी शोषण करना इनके लिए बाध्य हो गया, क्योंकि यह बहुत तेजी से अमेरिका नीचे जा रही थी, अपनी अर्थव्यवस्था को बचाने के लिए, तो उन्होनें और एक एग्रीमेन्ट किया, जिसका नाम था – 'नार्थ अमेरिकन फ्री ट्रेड एग्रीमेन्ट' नाफथा तीन ही देश आते, मेक्सिको, कनाडा और युनाईटिड स्टेट्स, तो इसमें पहले जब पब्लिश किया, ऐसा ही मीठा–मीठा पब्लिश किया, जब अमल शुरू हुआ तब लोगों को पता चला एकदम असंतोष भड़क गया। अब मेक्सीको के लोग सोफिसटीकेटेड नहीं है। वो हाथ में राईफल लेकर खड़े हो गए, सेना लाकर उनको दबाया गया, कनाड़ा में इसके खिलाफ असन्तोष हुआ जब क्रियान्वयन शुरू हुआ, और इतना घोर असंतोष था, और राज्यकर्त्ता दल के दुरभाग्य से उसी समय इलेक्शन्स आ गए। तो उस इलेक्शन्स में जिस रूलिंग पार्टी ने इस नाफथा पर हस्ताक्षर किया था, उसको पूरी तरह से उखाड़ फैंक दिया, केवल 2 मेम्बर पार्लीयामेन्ट उनके चुनकर आए।

विरोधी दल का उनका राज्य हो गया, और विरोधी दल के प्राइम मिनिस्टर ने पहला पत्र क्लिंटन को लिखा कि ये जो आपने नाफटा किया है हम जानते हैं कि किसी भी सुशिक्षित, सुसंस्कृत, सरकार का यह कर्त्तव्य है कि पुराने सरकारों ने जो अभिवनचन दिए होंगे उनका पालन करना,

किन्तु ये जो एग्रीमेन्ट है वो 'ऑब्वीयसली अनजस्ट एण्ड अनफेयर' स्पष्ट रूप से इतना अन्यायकारक है कि 'आई वांट, आई डिमांड री–नेगोसिएशन ऑन द सेम एग्रीमेन्ट', इसी एग्रीमेन्ट पर फिर से नेगोसिएशन की मैं मांग करता हूं, मेरा ख्याल है कि दुनिया के इतिहास में इस तरह की मांग 'फॉर द फर्स्ट टाइम उठाई गई', कि जिस एग्रीमेन्ट पर हस्ताक्षर हुए, उस एग्रीमेन्ट पर फिर से नेगोसिएशन हो ऐसी मांग फॉर द फर्स्ट टाइम आई है।

आम अमेरिकी भी त्रस्त

युनाईटेड स्टेट्स – मैने आपको बताया कि वहां की गरीब जनता को कुछ पता ही नहीं है कि ऊपर के लोग क्या गड़बड़ कर रहे है, तो वहां उपभोक्ताओं का बड़ा संगठन जिसके प्रमुख है मिस्टर नेडर, उनका उच्चारण है निडर, देखिए स्पेलिंग हैं एन आई डी आई आर, तो मिस्टर निडर ये युनाईटेड स्टेट्स के कंज्यूमर ऑरगनाईसेशन उपभोक्ता संघ के प्रमुख है। उन्होनें इनके खिलाफ उपभोक्ताओं का आन्दोलन खड़ा किया। वहां के मजदूरों ने इनके खिलाफ आंदोलन शुरू किया, क्योंकि इनके योजना के कारण लाखों लोग मजदूर, नौकरी से हटाए गए, लाखों परिवार बेघरबार हो गए, तो मजदूरों ने इसका विरोध किया, उपभोक्ताओं ने उसका विरोध किया। और हमको आश्चर्य हुआ, कि यह क्या गड़बड़ कर रहे हैं अभी तक वह बताते नहीं थे।

गोरे देशो के आम लोग विरोध में

धीरे–धीरे गोरे देशों के सब लोगों को जब पता चला, है तो वो गोरे देशों के लोग, किन्तु यह जो गड़बड़ कर रहे है इसका उपयोग, गोरे देशों के सामान्य जनता के लिए नहीं है, जैसा मैन कहा, कि गोरे देशों के राज्यकर्त्ता और गोरे देशों के उद्योगपति, पूंजीपति इनकी साठगाठ है, सामान्य जनता का इसमें लाभ नहीं है। सामान्य जनता ने जब ये सारा पढ़ा, तो वहां भी मानवतावादी कुछ लोग है, जो बड़े इंटलैक्चुअल है,

बुद्धिजीवी है, मानवतावादी है, ऐसे लोगों ने एक नया मंच खड़ा किया, जिस मंच का नाम है 'द अदर इकोनोमिक समेट' और इन हरामखोर लोगों की जहां बैठक होती है, जी 7 कन्ट्रीस की हर साल बैठक होती है, जहां बैठक होती है, जहां बैठक समाप्त होती है, उसी जगह, उसी शहर में, द अदर इकोनोमिक समेट की बैठक होती है, और इनके खिलाफ रेसोल्यूशन पास किए जाते हैं। पिछले बार दो साल के पहले मैं उधर गया था, डनवर में यह कॉन्फ्रेन्स थी, हमको भी बुलाया गया था, तो मैन देखा साठ लोग थे, वेश के साथ इनके खिलाफ बोल रहे थे, जितने आवेश के साथ हम लोग बोल रहे थे, माने अब उन लोगों में भी जागृति आ गई, और हमने वहां यह बताया था, कि हम आपके खिलाफ नहीं है लेकिन हमारा ऐसा ख्याल हो रहा है, विकसनशील देशों का कि आप सब मिलकर हमारा शोषण कर रहे है, तो आपके बारे में मिसअन्डरस्टेंडिंग हमारे देशों में हो रहा है, आप इनका विरोध कीजिए, खैर जो होगा, तो मेरे कहने का मतलब है कि गोरे देशों में भी मानवतावादी लोग इनके खिलाफ हो रहे हैं।

तो अमेरिका का जो विचार था, कि खटाक से सारा कर देना, कोई सावधान होने के पहले ही सारा हो जाएगा, वैसा नहीं हुआ और विश्व व्यापार संगठन यह संस्था खड़ी हुई। काहे के लिए खड़ी की कुछ निफरियस डिजाईन (बदनियताना साजिश) इनके जो माने खराब हेतु से जो काम वह करना चाहते है, तो उनके लिए माध्यम के नाते और उसके द्वारा वो सब देशों में अपना साम्राज्य फैलाना चाहते है।

नई पेटेन्ट व्यवस्था – डब्ल्यू.टी.ओ. का हथियार

अब इसमें पहला उनका है पेटेन्ट का कानून, अभी हमारे सरकार के ऊपर दबाव है पेटेन्ट का कानून जैसा हमको चाहिए वैसा आप बदल देंगे, वो क्या चाहते हैं। हमारे यहां भी पेटेन्ट का कानून है, 1970 का हमारा कानून है, अमेरिका का कानून दूसरे ढ़ंग का है, वो चाहते है कि वैसा कानून हमारा बदल जाए, दोनों में अन्तर क्या है समझ लीजिए।

एक तो है कि हमारे कानून, और हमारा कानून अच्छा है, ऐसा दुनिया के सब देशों ने कहा था, हमारे कानून में प्लान्ट्स का पेटेन्ट नहीं है, हर्बल मेडीसिन्स का पेटेन्ट नहीं है, पशुओं का पेटेन्ट नहीं है, बीजों का पेटेन्ट नहीं है, उनके इसमें सबका पेटेन्ट है।

और उस पर पेटेन्ट भी जो हमारे देश में है, वह प्रोसेस का पेटेन्ट है, प्रोडक्ट का पेटेन्ट नहीं है। माने जैसा च्यवनप्राश, माने गुरूकुल कांगड़ी ने च्यवनप्राश बनाया, तो गुरूकुल कांगड़ी जिस प्रोसेस से च्यवनप्राश बनाती है, उस प्रोसेस का वह पेटेन्ट ले सकती है, लेकिन च्यवनप्राश का पेटेन्ट नहीं होगा। दूसरा कोई दूसरे ढ़ंग से भी च्यवनप्राश बनाता है, तो उसको बनाने का अधिकार है, मार्केट में लाने का अधिकार है। वहां प्रोडक्ट का माने आपने एक बार किसी भी प्रोसेस से चीज़ बना जी, च्यवनप्राश बना लिया, फिर च्यवनप्राश का ही पेटेन्ट है, कोई दूसरे रास्ते से च्यवनप्राश बनाया तो भी उसको मार्केट में लाने का अधिकार नही है। अब इसमें वो चाहे जिस बात का पेटेन्ट कर लेंगे हमारे, मैने कहा ना लोगों को अंधेरे में रखना, यह सबसे बड़ी बात है, तो हमारे देश में भी यही हुआ, गैट के बारे में चर्चा हुई, डन्कल के बारे में चर्चा हुई, **किन्तु गैट पर जब हमारे लोगों ने हस्ताक्षर किया सरकार ने, पार्लीयामेन्ट को अंधेरे में रखकर किया। 13 दिसम्बर, 1996 को जो सिंगापुर में, इन्होनें दस्तखत किया, कि हम डब्ल्यू. टी. ओ. के मेम्बर बनते है, 12 दिसम्बर तक भारत सरकार ने घोषणा की, हम अमेरिका के सामने घुटने नहीं टेकेंगे, अमेरिका के सामने नहीं झुकने वाले हैं, 13 तारीख को एकदम आत्मसमर्पण कर दिया।**

बिक सकते हैं नेता और ब्यूरोक्रेट्स

आप समझ सकते हैं कि यह सारा क्यों होता है, हमारे लिए दुर्भाग्य की बात है कि हमारे बड़े–बड़े नेता पर्चेसेबल है, मैं बहुत जिम्मेवारी के साथ यह स्टेटमेंट कर रहा हूं, कि सेक्रेटरीस् तो पर्चेसेबल है ही, नेता और मिनीस्टर भी बहुत सारे ऐसे है कि जिनको विदेशी पूंजी खरीद सकती

है। ऐसे पुराने उदाहरण है अब नए क्या होगा, क्या नहीं हम बता नहीं सकते, ये केवल पार्टी का सवाल नही है, विदेशी पूंजी के हाथ बहुत लम्बे है, कौन खरीदा नहीं जाएगा, यही देखने की बारी हमारे ऊपर आने वाली है।

तो इस तरह से अब पेटेन्ट का कानून यदि आता है, अब देखिए नीम का उन्होनें पेटेन्ट कर लिया, हल्दी का पेटेन्ट कर लिया, बासमती का पेटेन्ट कर लिया, हमारे लोगों को पता ही नहीं, अमेरिका में पेटेन्ट कर लिया, हम लोगों को पता ही नहीं। और फिर बताएंगे कि यह हमारा पेटेन्ट है, कोई यहां बासमती नहीं लगा सकता, कोई नीम और हल्दी यहां नहीं बना सकता, बनाया तो मार्केट में नहीं ला सकता। क्यों ? तो बोलो हमने इसके ऊपर प्रयोग किया है इसीलिए हमारा पेटेन्ट हो गया, पेटेन्ट यानि एकाधिकार, सर्वाधिकार। अरे नीम पर, हल्दी पर, बासमती पर तुम्हारा अधिकार कैसे हो सकता है ? सैंकड़ो सालों से हमारे किसानों ने प्रयोग करते हुए और नीम है, हल्दी है, बासमती है, और भी सारे प्लांटस है, हमारे यहां के औषधि के जो वनस्पतियां है वो वहां ले जा रहे हैं, वही परस्पर उनका पेटेन्ट कर रहे हैं, हमको पता ही नहीं। और किसानों के लिए उनके हर एक प्लांट का वो पेटेन्ट करना चाहते है।

अब बीजों का पेटेन्ट

बीजो का पेटेन्ट इसका मतलब क्या है, कि हमारी कृषि हमारे हाथ में नहीं रहेगी, अमेरिका के हाथ में जाएगी। पेटेन्ट का अर्थ समझ लीजिए कि अभी क्या होता है, उदाहरण के लिए मैं केवल एक बताता हूं, लम्बा बोलना उचित नहीं। जैसे बीजो का पेटेन्ट है, उसका अर्थ क्या होता है ?

आज हमारे देश के सभी प्रदेशों में ऐसी पद्धति है, कि इस समय फसल है। तो इस समय की फसल से हर किसान कुछ बीज अगली फसल के लिए बचाकर रखता है। और अगले फसल के समय उसी बीज से, अपने ही बीज से वह अगली फसल उगाता है। अब इन्होनें यदि एक

बार बीज का पेटेन्ट कर लिया, तो हमारे किसान को अपने बीजों से दूसरी फसल निकालने का अधिकार नहीं रहेगा। अमेरिका से ही बीज लेना पड़ेगा, वो कहेंगे उसी कीमत पर लेना पड़ेगा, अपना बीज बचाकर वह अपनी दूसरी फसल नहीं निकाल सकता, और यदि मानो किसी ने कहा, कि हम तो यह कोने में पड़े है, हमने निकाली तो किसको पता चलेगा, ऐसा नहीं, उनके गुप्तचर रहेंगे सारे देश में, आपने यदि एक कोने में अपने बीजों से अपनी फसल निकाली, वाशिंगटन में रिपोर्ट जाएगा, वाशिंगटन से केवल एक पत्र दिल्ली को आएगा, कि आबूरोड़ के किसानों ने कानूनों का भंग किया है, उनको जेल में डालना चाहिए।

कृषि निर्यात का लाभ भी बहुराष्ट्रीय कम्पनीयों को

अब हमारे देश में रेडियो, दूरदर्शन, समाचारपत्र आदि सभी माध्यमों से बहुत जोर–शोर से यह प्रचारित किया गया कि डब्ल्यू.टी.ओ. आएगा, तो किसानों को, उनके उत्पादों को पूरी दुनिया में बेचने का लाभ मिलेगा। उनको अपने माल का निर्यात करने का मौका मिलेगा। परन्तु, वास्तव में हकीकत इसके बिल्कुल विपरीत होगी। अपने देश में सीमान्त और छोटे किसानों की संख्या बहुत बड़ी है। फसल आने के बाद छोटे किसान अपना माल निकटवर्ती बाजार में जाकर बेचने की जल्दबाज़ी करते हैं। उसे अपना माल कम से कम दाम में बिचौलियों को बेचना पड़ता है। जब तक बाजार में माल का अधिक मूल्य न मिले तब तक प्रतीक्षा करते रहें, बाद में माल को बाहर निकाला जाय तो उसे अधिक दाम मिलेगा, यह बात उसे अच्छी तरह से ज्ञात है। इसके बावजूद वह अनिच्छा से कम दाम में अपना माल बेचता है। क्योंकि उसे तत्काल पैसों की आवश्यकता होती है और दूसरी बात यह कि उसके पास माल रखने हेतु पर्याप्त भंडारण की व्यवस्था नहीं होती। सरकार की नीति के कारण भण्डार करने के लिए बिचौलियों को पर्याप्त राशि देनी पड़ती है। जिन्होनें कभी हल नहीं चलाया अथवा जिनके कपड़ों को कृषिभूमि की मिट्टी का धब्बा भी नहीं लगा हो, ऐसे लोगों को भण्डार बनाने के लिए राशि प्राप्त होती है। किन्तु जो सीमान्त और छोटे किसान अपनी फसल निकालते हैं, उनको भण्डार करने

हेतु राशि दिए जाने की कोई व्यवस्था नहीं है। यह स्थिति प्रायः सभी सीमान्त और छोटे किसानों की है और यही दशा मध्यम श्रेणी के किसानों की भी है। इसमें अपवाद मात्र धनवान किसान हैं और उनकी संख्या बहुत ही कम है।

ऐसी स्थिति में किसान अपने उत्पादन का निर्यात करने के लिए कैसे तैयार होगा ? जो बहुसंख्यक किसान अपनी स्वयं की इच्छा के खिलाफ कम दाम में अपना माल बिचौलियों को बेचता है उन्हें उसका लाभ बिल्कुल नहीं मिलता और उसकी ऐसी ही असहाय स्थिति रहेगी। उसका माल बिचौलिया खरीदकर अपने भण्डार में रखेगा और देश अथवा विदेशों में अच्छा दाम मिलने तक प्रतीक्षा करेगा। देशी बाजार में मुनाफा हजम करने की दृष्टि से आज वह सबसे ऊपर है। विदेशी बाजार में निर्यात की सुविधा भी ऐसे बिचौलियों को ही उपलब्ध हो सकती है। किसानों के उत्पादन को निर्यात में बढ़ावा अगर मिलता भी है तो उससे लाभान्वित होने वाला वर्ग बिचौलियों अथवा बड़े धनवान लोगों का होगा। इसमें ध्यान रखने योग्य एक पहलू और है कि औद्योगिक क्षेत्र में लघु उद्योग चलाने वाले छोटे उद्योगपति इसी नीति के कारण अपने को संकट में महसूस कर रहे हैं। वह तो छोटी मछलियां हैं, किन्तु उससे भी बड़ी मछली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की प्रतियोगिता में कहां टिक पाएगी, इसका अनुमान गोदरेज कम्पनी के हाल के अनुभव, से हो सकता है।

यह तो बड़ी मछली है। उनकी तुलना में किसानों का उत्पादन खरीद कर मुनाफा कमाने वाले बिचौलिये बहुत ही छोटे हैं। बहुराष्ट्रीय कम्वनी ऐसे बिचौलियों के साथ साँठ–गाँठ और उन्हें उचिव मुनाफा देकर निर्यात करने का एकाधिकार उनसे प्राप्त कर लेगी। **अर्थात किसानों के उत्पादन का निर्यात बढ़ने से उसका मुनाफा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को मिलेगा और अपने इस मुनाफे में से बहुत ही काम वह भारतीय बिचौलियों को देंगे और आम किसान जहां था, वहीं रहेगा।**

सर्ववाधारण किसान की 'बाजार में टिकने की क्षमता' (स्टेइंग केपेंसिटी) नहीं बढ़ाने की सरकारी नीति में कोई परिवर्तन होगा, ऐसा अभी ज्ञात नहीं हुआ है। बिचौलियों के विशेषाधिकार समाप्त किये जाएंगे, ऐसी भी कोई बात नहीं हैं, और न कोई समाचार है। अतः ऐसी स्थिति में इन सुविधा अथवा सूहलियतों का लाभ गरीब किसानों को मिलेगा, यह कहना गलत है। **हां, बहुत हुआ तो कहा जा सकता है कि किसानों के उत्पादन की निर्यात में वृद्धि होगी। किन्तु उससे होने वाला लाभ भी विदेशी पूंजीपतियों को ही होगा।**

आरोप लगाना पर्याप्त

अब शुरू से कानून का यह नियम है कि जो आरोप लगाता है उसके ऊपर ओनस होता है, ओनस यानि जिम्मेवारी उसके ऊपर होती है, कि उसका आरोप सही है, वह सिद्ध करे। यह यहां उल्टा न्याय ऐसा है, कि वाशिंगटन यदि पत्र लिखता है कि आबूरोड़ के किसानों ने कानून का उल्लंघन किया उनको जेल में डालो, तो उनके ऊपर जिम्मेवारी नहीं है यह बताने की कि उन्होनें उल्लंघन किया। आबूरोड़ के किसानों पर जिम्मेवारी डाली गई कि उन्हें सिद्ध करना चाहिए, कि हमने कानून का भंग नहीं किया। ऐसा कभी दुनिया में कानून बना है पहले। आरोप करने वाले पर आरोप सिद्ध करने की जिम्मेवारी नहीं, जिनके ऊपर आरोप लगाया जाता है उनके ऊपर जिम्मेवारी कि हमने कोई खराब काम नहीं किया।

स्वदेशी की लड़ाई क्यों ?

तो हमारे बीजों के लिए भी, हमारे पशुओं का भी, चाहे बकरी रहे, भैंस रहे, गांय रहे, बैल रहे, गधा रहे, सबका पेटेन्ट वो कर सकते है। और फिर उनके उनको रॉयल्टी देकर आप इन पशुओं का उपयोग कर सकते है। और उद्योगों में तो इतना महान संकट आने वाला है, सभी उद्योगों में वो अपना कब्जा जमाना चाहते है, और हमारे यहां अभी तक

कानून में ऐसी व्यवस्था है, कि एकदम सारे उद्योग उनके हाथ में नहीं जा सकते आज के कानून के मुताबिक और सरकार पर दबाव है, कि वह सारे कानून रद्द कर दो, और ऐसे कानून करो कि हम सीधे आकर उद्योगों को हाथ मे ले जाएं। यह सारा यदि हुआ, तो हमारे देश की स्वतंत्रता और सम्प्रभुता 'इण्डीपेन्डेन्स और सोवेरेनीटी' क्या रहेगी ? **इसीलिए स्वदेशी का जो संघर्ष है, यह स्वदेशी का संघर्ष है। माने किसान पूरी तरह** से अमेरिका के कब्जे में न जाए, उनके बीज, उनके पशू, उनके प्लांट्स इनका पेटेन्ट वो न कर सके। वनस्पतियों के पेटेन्ट वो न कर सके औषधि वनस्पतियों के। फिर हमारे उद्योग गोरे देशों के हाथ में न जाए। और इतना यदि गोरे देशों के हाथ में गया तो हमारी स्वतंत्रता का कोई मतलब ही नहीं रहता, इसीलिए स्वदेशी की लड़ाई यह स्वतंत्रता की लड़ाई है, सम्प्रभुता की लड़ाई है। मजदूरों को बचाने की लड़ाई, उद्योगों को बचाने की लड़ाई है, किसानी को बचाने की लड़ाई है, किसानों को बचाने की लड़ाई है। यह समझकर हम सभी लोगों ने जो देशभक्त है उन्होनें स्वतंत्रता, सम्प्रभुता इनको बचाना हमारा कर्त्तव्य है।

बड़ी मुश्किल के बाद 15 अगस्त, 1947 को हम स्वतंत्र बने, वो जो स्वातंत्रय आया वह अब हाथ से निकलने वाला है। और यह सारे बातों की जानकारी हमारे नेता जनता को नहीं दे रहे, गोरे देश भी यह चाहते है कि आम जनता को आर्थिक बातों का पता न चले, हमारे नेता भी यह जानकारी नहीं दे रहे, और इसीलिए हमने जागृत होकर स्वदेशी का आन्दोलन चलाना चाहिए और अपने देश की स्वतंत्रता, सम्प्रभुता रखना चाहिए, इतना ही कहना इस समय पर्याप्त है।

किसी ने कुछ पूछना हो तो पूछ सकते हैं, लेकिन माफ करना भई कि यह विषय ऐसा है, मैं जानता हूं सबके लिए बोर हो सकता है, क्योंकि टेक्नीकल है, पोलीटीकल भाषण में किस्से, कहानीयां, चुटकले, विनोदी कथाएं यह सारा चल सकता है, इस विषय में यह सब चुटकले वगैरह

नहीं चल सकते, तो आपको ज़रा बोर हुआ होगा, इसके लिए मैं माफी मांगता हूं।

कपटपूर्ण भावना, पर लुभावनी शब्दावली

अच्छा उनकी एक तरकीब है, वो बड़े–बड़े शब्दों का ऐसा प्रयोग करते हैं, कि अंग्रेजी पढ़े–लिखे लोग उनके जाल में फंस जाते हैं, जैसे, पहले ग्लोबलाईसेशन शब्द आया, लिब्रलाईसेशन शब्द आया, लोगो ने कहा सब अच्छी कल्पना है, हम पूछते थे भई ग्लोबलाईसेशन क्या है? ग्लोबलाईसेशन के पहले ये तो हम है, जिन्होनें हजारों साल पहले कहा 'वसुधेव कुटुम्बकम', सारा विश्व ही हमारा परिवार है, इनका ग्लोबलाईसेशन, हेजीमोनिसम है। हेजीमोनिसम का मतलब है कि थोड़े देशों का बाकी देशों पर वर्चस्व। तो यह हेजीमोनिसम यानि ग्लोबलाईसेशन, पहले लोग नहीं समझते थे, अब समझने लगे है। किन्तु शब्द ग्लोबलाईसेशन, लिब्रलाईसेशन, वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन, इसका एक प्रभाव होता है।

समाधान – मोड़ो, तोड़ो या छोड़ो

अब ये जो वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन के बारे में हमारी जो भूमिका है, मैं आपको बताना चाहता हूं, कि वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन में यदि विकसनशील और विकसित दोनों देशों ने रहना है, जैसे आज है, तो दोनों को समान स्टेटस से व्यवहार मिलना चाहिए, दादागीरी नहीं चलनी चाहिए। तो पिछले 3–4 नवम्बर, 1997 को क्वालालम्पुर में महाथिर मोहम्मद ने एक कॉन्फ्रेंस ली थी, विकसनशील देशों की, जिसको 'जी 15' कॉन्फ्रेन्स कहते हैं, उसमें उन्होनें यह रिसोल्यूशन पास किया कि वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन में सबको समान अधिकार होना चाहिए, गोरे देशों की दादागीरी नहीं चलनी चाहिए, और यदि दादागीरी चलायेंगे तो हम वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन के बाहर आ जाएंगे। विकसनशील देशों का गुट बनायेंगे, वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन में रहे, तो उसके अन्दर रहते हुए

विकसनशील देशों का गुट बनायेंगे, बाहर आए तो बाहर आते हुए विकसनशील देशों का गुट बनायेंगे, ये उन्होनें प्रस्ताव पारित किया। स्वदेशी जागरण मंच यही बात बोल रहा है।

डब्ल्यू.टी.ओ. की चुनौती का सामना– मानसिकता का प्रश्न

लेकिन हमारे अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों के मन में ऐसा प्रभाव है शब्दों का, **हमारे यहां कहा शब्द मंत्र है, मालूम होता है मंत्र ही है,** अब क्या हुआ मैं विदेश से आने के बाद पांच जगह कुछ अपने ही स्वयंसेवक, इकोनोमिस्ट इनके साथ चाय पर बैठने का योग आया। अब पहले तीन बैठकों में क्या हुआ कि वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन के बारे में चर्चा चली, उससे नुकसान क्या है, फायदा क्या है, फायदा एक तो यह है "फेवरड नेशन ट्रीटमेन्ट" बाकी सारा नुकसान ही है। और फिर अपनी सोवेरनीटी जाती है, सम्प्रभुता जाती है। तीनों बैठकों में ऐसा हाल था, कि वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन की जितनी जानकारी मेरे पास थी, उतनी जानकारी उनके पास भी थी, वो भी अर्थशास्त्रज्ञ थे। और जब चर्चा होती थी, तो वो सारा बोलते थे, कि भई ये डिस्एडवांटेज है, वो डिस्एडवांटेज है, डिस्एडवान्टेजेज आऊट वे दि एडवान्टेजेज, माने एडवान्टेजेज से बहुत ज्यादा डिस्एडवान्टेजेज है, सब जानते थे।

फिर इतना होने के बाद भी जब मैं आखिरी में कहता था कि भई ऐसा यदि है, तो हम बाकी विकसनशील देशों के साथ हम यदि बाहर आ गए तो उसमें आपत्ति क्या है, तो प्रतिक्रिया यह थी, कि वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन से बाहर आना, वर्ल्ड ऑरगनाईसेशन के बाहर आना, माने हम वर्ल्ड ऑरगनाईसेशन के बाहर आयेंगे, अलग–थलग पड़ जायेंगे, माने दुनिया में अकेले रहेंगे, फिर हमारा क्या होगा, तीन जगह अनुभव आने के बाद मैने यह समझा कि यह प्रश्न समझदारी का नहीं है, साईकोलोजिकल है, मानसिकता का है।

चौथी जगह ऐसे ही लोग बैठे हमने कहा भई वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन, इज ए निस नोमर, इट इस अ वेस्टर्न वर्ल्ड ट्रेड

ऑरगनाईसेशन, वेस्टर्न वर्ल्ड के नाते जबरदस्ती हमें बली का बकरा इस नाते हमें घुसेड़ा गया है। तो पांच मिनट में डिस्कशन समाप्त हुआ क्योंकि वो सब जानते थे, जितना मैं जानता था। और पांचवे मीटींग में तो कमाल हो गया, हमने शुरूआत ही यहां से की, कि वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन इट इस अ वेस्टर्न वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईसेशन, चर्चा ही बन्द हो गयी, क्योंकि वो सब जानते थे उन्होनें कहा कि बाहर निकलने में आपत्ति नहीं है, तो शब्दों के प्रभाव में हमारे अंग्रेजी पढ़े लिखे लोग, अभी वो मानसिक दासता के कारण वो ज़रा तैयार नहीं होते।

हमारी जिम्मेदारी

अब, आज हमारी सरकार की स्थिति ऐसी है, जैसे अजगर के बारे में देहाती लोग कहते हैं कि उसने एक छिपकली पकड़ ली, उसे वह निगल भी नहीं सकती और उगल भी नहीं सकती। ऐसी अवस्था में आज सरकार है। हम में आज क्या इतनी ताकत है कि आर्थिक गुलामों हम आने नहीं देंगे।

दूसरी बात हमें आलस्य की ऐसी आदत लग गई है कि कोई भी काम हम स्वयं नहीं कर सकते। हम कहते हैं कि सरकार की पॉलिसी क्या है ? सरकार पॉलिसी ऐसी बननी चाहिए। ऐसी हालत में हम आर्थिक गुलामी का विरोध कैसे कर सकेंगे ? ऐसी स्थिति में सरकार तो कुछ करना नहीं चाहती, इस काम के लिए जो प्रखर देशभक्ति चाहिए वह दिल्ली में नहीं है। मान लीजिए कि दिल्ली सरकार ने प्रखर देशभक्ति दिखा भी दी तो क्या जनमानस में इतना जागरण है ? केवल सरकार अपने भरोसे विदेशी गुलामी को खत्म नहीं कर सकती। सरकारी पॉलिसी से काम होने वाला नही।

हम उपभोगवादी हो गए है। हमारी आदतें बिगाड़ दी गई है। जब भी स्वदेशी का सवाल आता है हम विदेशी के मुकाबले स्वदेशी विकल्प खोजते ही नहीं। फिर हो सकता है कि स्वदेशी चीज गुणवत्ता में कुछ कम

हो सकती है, पैसे भी कुछ ज्यादा लग सकते हैं। परन्तु उपभोक्तावादी होने के नाते हम सोचते हैं कि यह स्वदेशी है या विदेशी है इससे मुझे क्या लेना–देना है ? आर्थिक गुलामी से मुझे क्या ? मेरी बीवी खुश है, देश जाए भाड़ में। जब हमारे विचार ऐसे हैं तो विदेशी माल की ओर ही हमारा झुकाव होगा। परन्तु स्वदेशी ख़रीदेंगे यह प्रवृत्ति लानी है। कठिन नहीं है। आपने देखा होगा कि हमारे देश की पहली सरकार में ऐसे लोग थे जिनके कपड़े पेरिस से धुल कर आते थे, वे खद्दर पहनने लगे थे। प्रवृत्ति को जगाया जा सकता हैं। यदि नेता में यह प्रवृत्ति है तो बाकी लोगों में भी जगायी जा सकती है। लेकिन यह प्रवृत्ति कब तक जागृत होती है ? विकल्प कौन सा है यह प्रश्न कम महत्व का है। पहला सवाल है कि देशभक्ति के लिए प्रखर देशभक्त मानस बनाने की जरूरत है। यह कब तक तैयार होगा ?

कहते हैं कि जमाना बदल गया है। पर नहीं तुम बदल गए हो। 1947 से पहले स्वातन्त्र्य के लिए लड़ने की जैसी आकांक्षा थी वैसी ही आकांक्षा त्याग की भी थी। परन्तु आज क्या यह प्रवृत्ति है। अच्छे–अच्छे उपभोक्ताओं में भी यदि देशभक्ति की प्रवृत्ति हो तो वे त्याग करते हैं। दोनों महायुद्धों के समय सभी देशों के अच्छे–अच्छे लोगों ने त्याग किया। पहले जर्मनी नहीं था। 13 राज्य थे। वह खड़ा हुआ, देशभक्ति की भावना थी, राजा स्वंय देशभक्त था। उन्होनें अपील की यदि लोगों ने हमें पैसा नहीं दिया तो हम दिवालिया हो जायेंगे। ऋण देकर नहीं चलेगा। सभी कुछ दो। आपको आश्चर्य होगा कि बहुत फैशनेबल नारियों ने भी अपने जेवर दे दिए। क्यों ? देशभक्ति की भावना थी। अब यह भावना यदि जागृत नहीं तो सरकार क्या कर सकती है ? जनता का सहयोग चाहिए। यदि दोनों सरकार और जनता का समर्पण, सहयोग होगा तो इस आर्थिक गुलामी से निकलना सम्भव होगा। इस बात को समझना चाहिए।

जनविरोधी आर्थिक नीतियां

मैं भाषण के प्रारम्भ में क्षमा–याचना करना चाहता हूँ। क्षमा याचना इसीलिए कि मैं बैठकर बोल रहा हूँ। यह धृष्टता है मैं जानता हूँ। पिछले वर्ष दो बड़े ऑपरेशन होने के कारण जो कमजोरी आई उस कमजोरी के कारण ज्यादा देर तक खड़े रहना मुश्किल हो जाता है। इसीलिए आप मुझे बैठकर बोलने के लिए माफ करेंगे।

आवश्यक प्रचार मिले

यहाँ आने के बाद हमने देखा कि इस रैली के लिए मीडिया ने भी पूरा सहयोग दिया। मैं मीडिया का भी आभारी हूँ। वैसे मीडिया के लोग जानते है कि भारतीय मजदूर संघ अन्य कई संस्थाओं, नेताओं के समान सस्ती पब्लिसिटी (लोकप्रियता) या प्रचार के पीछे नहीं जाती है। जैसे हम औद्योगिक क्षेत्र में कहते हैं कि ""नीड बेस्ड मिनिमम वेज' (need based minimum wage) हरेक को मिलना चाहिए। वैसे ही "नीड बेस्ड मिनिमम पब्लिसिटी" (need based minimum publicity) मजदूरों को मिलनी चाहिए। यह हमारी प्रार्थना है। हम उन लोगों में नहीं है जो सस्ते प्रचार में विश्वास रखते हैं। जो इमेज बिल्डिंग में विश्वास रखते हैं। आज हिन्दुस्तान में सभी संस्था के लोग इमेज बिल्डिंग के प्रयास में है। ऐसी संस्थाओं के एक व्यक्ति दो व्यक्ति का इमेज बिल्डिंग करने से उनका काम बढ़ेगा या देश का भला होगा। मुझे ऐसा नहीं लगता। वास्तव में इस विषय को शास्त्रीय अन्वेषण एक व्यक्ति ने किया है। पीटर ड्रकर उसका नाम है। उन्होनें इसका विशेष तौर पर अध्ययन किया है और अपने अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर कहा है कि इमेज बिल्डिंग एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें हर तरह से नुकसान होता है। पीटर ड्रकर कहते हैं कि इमेज बिल्डिंग के प्रयास में लाभ होता दिखता है लेकिन जिस व्यक्ति की इमेज आप बिल्ड अप करते हैं उसका दिमाग भी बिगड़ जाता है। आपका संगठन खोखला हो जाता है और देश को भी नुकसान होता है। स्टालिन,

हिटलर, मुसोनली इन सबका उदाहरण देकर पीटर ड्रकर ने ये बात कहीं है। और अपने पुस्तक के अध्याय में उन्होनें एक अलग बात कही है।

द टेल ऑफ चेरिसिना (The Tale of Charisina) यह करिश्मा का खेल है। लेकिन मिनिमम पब्लिसिटी जिसके कारण मजदूरों को क्या कहना है यह जनता के, सरकार के सामने आ जाए। इतनी सहयोग चाहिए और इसके लिए मैं आभारी हूँ कि मुझे अच्छा सहयोग मिला है। आगे भी इसी तरह का सहयोग मुझे देते रहेंगे। मुझे ऐसा विश्वास है। इसीलिए मैं सभी पत्रकारों का भी आभारी हूँ।

आगे विषय की जानकारी आपको होगी। यह सभी समाचारपत्र, टी. वी., रेडियो में आता है। सभी भाषाओं में आता है। और पहले जो हमने सुना है उसी को दोहराना याने आपके समय का दुरूपयोग करना है। आपके ऊपर अन्याय होगा। इस दृष्टि से कुछ प्रमुख बातें मैं आपके सामने रखना चाहता हूँ।

वित्तमंत्री बनते ही विस्मरण

पहली प्रमुख बात हमें ऐसा दिखाई देता है कि भारत में वित्त मंत्री बनने के बाद, शपथ ग्रहण करने के बाद उनको एक बीमारी हो जाती है। अंग्रेजी में कहते है 'एमनेशिया' याने सभी कुछ भूलना, कोई कुछ कहे, भूल जाना। मैं कौन हूँ ? कहाँ से आया ? कहाँ जाना है ? अर्थात् पूर्ण 'एमनेशिया'। वित्तमंत्री को होता है यह दिखाई पड़ता है।

मलेशिया के महातिर मुहम्मद ने एक कमीशन बनाया था। उसका नाम था 'साऊथ कमीशन'। तंजानिया के जुलियस न्येरेरे उसके अध्यक्ष थे एवम् उसके प्रमुख सचिव थे हमारे डॉ. मनमोहनसिंह। डॉ. मनमोहनसिंह के वैचारिक नेतृत्व में एक रिपोर्ट बनी। वह रिपोर्ट आप देख सकते हैं। चैलेंज टू द साउथ (Challenge to the South) उस रिपोर्ट का नाम है। उसकी भूमिका में उन्होनें कहा है कि हम लोग पर जो आर्थिक साम्राज्य

आ रहा है, उसका प्रतिवाद करना चाहिए। उसके लिए विकसनशील देशों को आपस में साउथ–साउथ कॉपरेशन (south-south Cooperation) करना चाहिए। ये वही बाते हैं जो हम बोलते हैं। लेकिन क्या विवशता आई कि उन्होनें जैसे ही वित्तमंत्री की शपथ ली, सब भूल गए। पूर्ण विस्मृति (Total Amnesia) हो गयी। उन्होनें पहले जो भी बोला था, ठीक उसके विपरीत कार्य करना प्रारम्भ किया। जैसे डॉ. मनमोहनसिंह ने किया। वैसी ही यशवन्त सिन्हा के दिमाग की भी हालत है। मैं आपसे कह रहा हूं – यदि यह झूठ होगा तो वह प्रतिवाद करें।

स्वदेशी जागरण मंच की चिन्तन बैठक नागपुर में हुई। उस बैठक में यशवन्त सिन्हा जी ने भी हिस्सा लिया था। उस बैठक में यशवन्त सिन्हा जी ने दुख व्यक्त किया था कि विश्व व्यापार संगठन में सम्मिलित होने से हमारा सब तरह से नुकसान हो रहा है और हमारी संप्रभुता भी खतरे में पड़ सकती है। हमें निश्चय ही विश्व व्यापार संगठन छोड़ देना चाहिए (We must quit WTO)। यशवन्त सिन्हा जी ने कहा था। लेकिन उन्होनें जैसे ही वित्त मंत्री की शपथ ली, पूर्ण विस्मृति हो गयी। वह सबकुछ भूल गए। उन्होनें जो बोला था, उसके ठीक विपरीत व्यवहार करना शुरू किया।

मैं अलग–अलग देशों में पत्र लिखना–चाहता हूँ (व्यंग्य में) कि यदि राजनेताओं की एम्नेशिया का कोई इलाज मेडिकल साइंस में हो तो वे हमें जरा बताएँ।

अवैध हस्तक्षेप

इन दिनों यशवन्त सिन्हा जी हमें बताते हैं कि हमारी अर्थव्यवस्था बहुत प्रगति कर रही है, यह तो अभिनन्दनीय बात है। अब पहला ही कदम इस बजट के समय उठाया गया है, वह आश्चर्यजनक है।

1943 के बाद ऐसा कभी हुआ नहीं था। यशवन्त सिन्हा जी ने श्रम मंत्रालय के क्षेत्राधिकार में अवैध हस्तक्षेप किया है। जो काम श्रम

मंत्रालय का है जिस काम को करने के लिए राष्ट्रीय श्रम आयोग की स्थापना की गई है। श्रीमान् रविन्द्र वर्मा की अध्यक्षता में जिसका काम चल रहा है। इन्होनें उसके क्षेत्राधिकार में उसके कानून में परिवर्तन करने की संसद में घोषणा की है। कानून की भाषा में बताना चाहता हूं कि यह अपराध है। और यशवन्त सिन्हा जी के लिए मैं कहूंगा कि इस दृष्टि से "मिस्टर यशवन्त सिन्हा इज़ ए क्रिमिनल"। मेरे–आपके लिए जो श्रम की मर्यादा थी, वह खत्म की गई। इसके कारण लाखों मजदूर आज असुरक्षित हो गए हैं। 'कॉंट्रैक्ट लेबर' फिर से शुरू हो जाएगा। यानि यह हर तरह से बात मजदूरों के खिलाफ जाने वाली है।

विवेकहीन विनिवेश

दूसरी बात, इस समय इनका कहना है कि नई आर्थिक नीति काफी सफल हो रही है। मैं सिन्हा जी से पूछना चाहता हूं कि आपकी कौन–कौन सी नीतियां सफल हुई है ? बताइए, आपने कहा था कि बजट के कारण बहुत बड़ा विदेशी निवेश होगा। विदेशी निवेश से कितना पैसा आया ? इससे कितना विकास दर बढ़ेगा ? लक्ष्य तक आप पहुँचे हैं क्या ? आपने विनिवेश की बात की। क्या हुआ उसका ? 'मॉडर्न फूड' कूड़े के भाव बेचे गए। इसमें ज्यादा बोलने की आवश्यकता नहीं। कूड़े के भाव 'मॉडर्न फूड' का विनिवेश किया गया। आज 'मॉडर्न फूड' बीमार है। बाल्को का मामला आपके सामने है। मैं मानता हूं कि विनिवेश मंत्री अरूण शौरी ईमानदार है। मैं अरूण शौरी की ईमानदारी पर प्रतिवाद नहीं करता। लेकिन या तो बाह्य दबाव के कारण या नीचे से नौकरशाहों द्वारा गलत सलाह के कारण उन्होनें 'बाल्को' का समझौता किया है। वह समझौता पूरा का पूरा झूठ है, फ्रॉड है। ये दोनों परस्पर विरोधी बातें, मैं कह रहा हूँ। और इसका भी वही नतीजा होने वाला है जो नतीजा 'मॉडर्न फूड' का हुआ। अरे, वह तो लाभ में चल रहा था, उसे क्यों बेच रहे हो ?

सरकार की ओर से दुष्प्रचार बहुत चलता है, कि सार्वजनिक उद्योग घाटे में जा रहा है। उनका हम निजीकरण करेंगे। कौन–सा सार्वजनिक उद्योग घाटे में जा रहा है, यह सरकार को पता है क्या ? ये लोग नौकरशाह जो कहेंगे, वही मानकर चलते हैं। मैं आपको बताना चाहता हूँ यदि बहस हुई, जांच हुई तो मैं उनके सामने तथ्य देने के लिए तैयार हूँ। कई तथ्य ऐसे हैं जिनसे यह स्पष्ट है कि सार्वजनिक उद्योगों को जानबूझकर घाटे में ले जाया गया है। और कहा तो यह भी जा रहा है कि घाटा मजदूरों के कारण हो रहा है। वास्तव में यह सही नहीं है। घाटा मजदूरों के कारण नहीं हो रहा है, वे इस तरह से गलत प्रबंधन कर रहे हैं कि आपका सार्वजनिक उद्योग घाटे में जाए, ताकि उसे आसानी से इस आधार पर दूसरों के हाथों बेचा जा सकें। क्योंकि जिसके हाथ में जाएगा वे पहले ही पैसे आपके जेब में रख देते हैं। वे उन्हें खरीद लेते हैं, ऐसा आप समझ लीजिए। अधिकांश नौकरशाह बिकाऊ है, बहुत सारे पहले से बिके हुए है। वे झूठी रिपोर्ट देते है कि सार्वजनिक उद्योग घाटे में जा रहे हैं। मैं चुनौती देकर कहना चाहता हूं कि संयुक्त समिति बैठाइए, हम लोगों को भी उसमें बैठाइए। हम बता सकते हैं, ये उद्योग घाटे में नहीं जा सकते अपितु सही ढंग से प्रबंध किया तो लाभ में जायेंगे। इस चीज को करने की जिम्मेवारी हम लेते हैं। आप विदेशियों से पैसे लेकर अपने देश के साथ गद्दारी करते हुए एक–एक सार्वजनिक उद्योग को गलत प्रबंधन के कारण घाटे में धकेल रहे हैं। ऐसे कौन–कौन गद्दार है, उन्हें पता करने की आवश्यकता है। हम उन्हें किसी कीमत पर नहीं छोड़ सकते हैं।

एनरोन का मामला, दाषीयों को सजा दें

अब 'एनरॉन' का मामला है। गोड़बोले समिति ने अपना अंतरिम रिपोर्ट दिया है। हम पहले से मांग कर रहे हैं कि एनरॉन का जो समझौता हुआ, वह स्पष्ट रूप से गलत था। यह समझौता कैसे हुआ ? कौन–कौन से राजनीतिक दल उसमें शामिल थे ? कौन–से नौकरशाह उसमें शामिल थे और जो पुनर्समझौता हुआ, उसके लिए कौन–कौन जिम्मेवार है ? और

खासकर जब तेरह दिन की सरकार थी उन दिनों, जब दूसरे दिन वही सरकार जाने वाली थी हड़बड़–गड़बड़ करके चार लोगों को मिलाकर और बताया गया कि केन्द्र सरकार ने काऊण्टर गारण्टी दी है। यह जो चालाकी है किसने की है ? यह सारा सामने आना चाहिए, स्पष्ट होनी चाहिए। पूरी छानबीन होनी चाहिए और यह गड़बड़ी करने वाले लोगों को छोड़ना नहीं चाहिए। उन्हें पहचानना और दण्डित करना चाहिए। नहीं तो इस तरह की गड़बड़ हमेशा चलती रहेगी। **एनरॉन के बारे में हमारा कहना है कि एनरॉन को ध्वस्त कर देना चाहिए (Enron should be scrapped)। फिर क्या होगा क्या नहीं, विचार करने की कोई ज़रूरत नहीं है। एनरॉन निश्चय ही वापस जाए (Enron must go back.)।**

रिसपोंसिव कॉ–ओपरेशन

हमारा भारतीय मजदूर संघ कुछ रीति–नीति लेकर चला है। हमारी नीति इस प्रकार है, जिसे कहते हैं उत्तरदायी सहयोग (Responsive cooperation)। इसका मतलब यह है कि सरकार में पार्टी कौन–सी है, इससे हमको लेना देना नहीं है। जो भी सरकार हो, उसकी नीतियाँ राष्ट्र और मजदूरों के लिए अच्छी है या बुरी, हम यही देखने वाले हैं।

हम सरकार का उसी स्तर तक सहयोग करेंगे, जिस स्तर तक सरकार जनता, मजदूर और देश का सहयोग करेगी। लेकिन हम उस स्तर तक सरकार का विरोध करेंगे जिस स्तर तक सरकार जनता, मजदूर और देश का विरोध करेगी। सरकार की नीति क्या है इसको देखकर हम अपना रूख तय करते हैं। कौन–सी पार्टी सरकार में है यह हमारे लिए महत्व की बात नहीं है। पार्टीयों तो आती रहती है। यह प्राचीन राष्ट्र है। यहाँ कितनी ही पार्टी आयी है कितनी ही सरकारें आती रहेंगी ही।

राजसत्ता पर जनसंगठन रूपी अंकुश

बहुत लोग हमसे प्रश्न पूछते हैं कि अरे भई आपकी रैली से सरकार को धक्का लगने वाला है। हमने कहा कि हमारे रैली के कारण सरकार को धक्का लगने वाला नहीं है। सरकार स्वयं को धक्का लगने वाला नहीं है। सरकार स्वयं को धक्का लगाने का काम स्वयं ही कर रही है। उसमें हमारी आवश्यकता नहीं है। किन्तु सरकार जाने से क्या होगा, इसका सब लोगों को ख्याल रहता है। एक पार्टी की सरकार जाने के बाद दूसरी किस पार्टी की सरकार आएगी, यह सोचना ही गलत है। एक पार्टी की सरकार जाएगी तो दूसरी पार्टी की आएगी। परिणाम एक समान रहेंगे। श्रेष्ठ राज्य व्यवस्था के लिए जागरूक जनशक्ति, नित्यसिद्ध जनशक्ति होनी चाहिए जो किसी भी पार्टी की सरकार हो, उसके लिए अंकुश का काम करें। एक प्रधानमंत्री के जाने एवम् दूसरे प्रधानमंत्री के आने से विकल्प में बड़ा फर्क होगा ऐसा महसूस नहीं होता है। हमारे यहाँ पुराणों में कहा गया है राजसत्ता हाथी के समान होती है। लेकिन जब कोई हाथी मेरे बगीचे में या आपके जंगल में घूम रहा होता है तो क्या आप हाथ पर हाथ रखकर कहेंगे कि हे भगवान हाथी जी का मूड अच्छा रखो, नहीं तो मेरा बगीचा खराब हो जाएगा, मेरा जंगल ध्वस्त हो जाएगा। हमें ऐसी प्रार्थना नहीं करनी चाहिए। किन्तु यदि हाथी गड़बड़ करेगा तो ? **तो प्राचीन परम्परा है कि समाज में नैतिक नेतृत्व (मोरल लीडरशिप) हाथी के लिए समाज के हाथ का अंकुश है। जो राष्ट्रभक्त लोगों का जन संगठन है, वही सत्ता का अंकुश है, जो नैतिक नेतृत्व के हाथ में रहता है। हाथी गड़बड़ करना शुरू करता है तो हाथी के गण्डस्थल पर नैतिक नेतृत्व का अंकुश दवाएंगे तो हाथी को चीं–चीं करके बैठना पड़ेगा।** जागरूक, प्रशिक्षित, नित्य सिद्ध जन शक्ति सभी सरकारों के ऊपर अंकुश है। सरकार आए या सरकार जाए किन्तु राष्ट्र निरन्तर गतिमान रहेगा। इस दृष्टि से हम लोग एक स्थायी विकल्प के रूप में 'जन शक्ति' का निर्माण करने के लिए इच्छुक है। इसीलिए यह रैली बुलायी है।

इन्द्राय – तक्षकाय स्वाहाः

लोगों के मन में तरह–तरह के प्रश्न हैं। कुछ वर्ष पूर्व हमारी रैली हुई थी। कुछ लोगों ने कहा कि ठेंगड़ी जी आपकी ताकत क्या हैं ? आप मल्टीनेशनल (बहुराष्ट्रीय कम्पनीयों) के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर रहे हैं। मल्टीनेशनल तो सरकार का कवच पहने हुए है। हमने कहा कि ऐसा है कि हम अपनी सरकार के विरोध में नहीं है, समर्थन में भी नहीं है। हम मल्टीनेशनल का विरोध करते हैं। लेकिन यदि मल्टीनेशनल को बचाने का काम सरकार करती है तो हमें सरकार का भी विरोध करना पड़ेगा। प्राचीन काल में ऐसा हुआ कि जनमेजय राजा ने सर्प यज्ञ किया। यज्ञ में एक–एक सर्प का नाम लेकर यज्ञकुण्ड में आहुति दी जानी लगी। उन्होनें 'तक्षकाय स्वाहा' करके आहुति दी। बाकी सारे साँप आ गए, लेकिन तक्षक नहीं आया। उन्होनें सोचा कि मैने 'तक्षकाय स्वाहा' कहा लेकिन तक्षक क्यों नहीं आया ? उन्होनें जब दिव्य दृष्टि से देखा तो पता चला कि इन्द्र ने अपनी पीठ के पीछे तक्षक को छिपा रखा था। जनमेजय ने इन्द्र से कहा कि आप तक्षक को छोड़ दें। इन्द्र ने कहा, नहीं मैं इसे नहीं छोड़ सकता। तो फिर बाध्य होकर उन्होनें कहा 'इन्द्राय तक्षकाय स्वाहा'। जैसे ही ऐसा कहा गया, इन्द्र पीछे हटे और तक्षक यज्ञकुण्ड में आ गिरा। हमारा आज के सरकार से वैसे कोई विरोध नहीं है। लेकिन यदि वे तक्षक को अपने पीछे छुपाते हैं तब हमको इस सरकार के बारे में भी कहना होगा कि 'इन्द्राय तक्षकाय स्वाहा'।

अब गेंद उनके पाले में है। सरकार को तय करना है कि हमें उनके खिलाफ लड़ाई लड़नी है या नहीं। यदि वे चाहते हैं कि हम उससे मिलकर चलें तो मल्टीनेशनल को सुरक्षा देने का गोरखधंधा आज के इस सरकार को बन्द करना चाहिए। वरना 'इन्द्राय तक्षकाय स्वाहा' करना पड़ेगा।

जन विरोधी आर्थिक नीतियाँ

सभी लोग जानते हैं आपने भी सुना होगा कि लाखों मजदूर बेरोजगार हैं। सरकार की नीति के कारण आत्महत्या करने पर तुले हुए हैं। सैंकड़ों किसानों ने आत्महत्या की है। हर प्रदेश का किसान आत्महत्या कर रहा है। लाखों की तादाद में लघु उद्योग बन्द हो गए हैं। हर तरह से लाखों लोग परेशान हैं। लोगों ने पूछा कि 'आपकी ताकत क्या है ? लोग पैर तले कुचल रहे हैं फिर भी आपने जवाब नहीं दिया'। आज हम यह कह सकते हैं कि हमारी ताकत बहुत बड़ी है और हमारी ताकत बढ़ाने का काम स्वयं सरकार कर रही है। सभी उद्योगों को मिटाने और मजदूरों को बेरोजगार करने का काम शुरू किया गया है। किसानों को भी आयात शुल्क और सब्सिडी के कारण आत्महत्या करने के लिए मजबूर किया जा रहा है। लघु उद्योग बन्द हो रहे हैं। इससे हमारे समर्थन में बाकी लोग आकर खड़े हो जायेंगे – इसके लिए सरकार स्वयं काम कर रही है और अपने लिए शत्रु निर्माण करने में यह सरकार स्वयं लगी हुई है। इसी से यह ज्ञात हो जाता है कि हमारी ताकत क्या है। हमारा कहना है कि सरकार की कृपा से हमारी ताकत दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है। वे अपने शत्रुओं की संख्या बढ़ाते जा रहें है। यह बात ध्यान में रखना चाहिए।

रावण रथी, विरधी रघुवीरा

किन्तु आखिर हम सब कब तक चुप बैठेंगे और इस दृष्टि से लोग पूछते हैं कि हमें थोड़ा समझ लेना चाहिए। इतिहास में कई बार ऐसे प्रसंग आए हैं कि जनता और राष्ट्र को खाने के लिए तैयार खड़ी आसुरी शक्तियों का मुकाबला करने वाली साधन विहीन दैविक शक्तियाँ छोटी दिखाती है। एक ओर सर्वसाधन युक्त आसुरी शक्तियां खड़ी होती है और दूसरी ओर साधनहीन देशभक्त शक्तियां होती है। इस अवस्था को देखकर सबके मन में भय पैदा होता है – "रावण रथी विरथ रघुवीरा। देखि विभीषण भयहुँ अधीरा।" विभीषण ने देखा कि रावण के पास साधन है,

और राम बेचारा जमीन पर खड़ा होकर लड़ रहा है। विभीषण के मन में भय पैदा हुआ। लेकिन आसुरी शक्ति का विजय हुआ क्या ? सर्वसाधन सम्पन्न आसुरी शक्ति को परास्त करते हुए दैवी शक्तियां विजय हुई। यही बात शालिवाहन के समय हुआ। वे साधनहीन थे, फिर भी विजयी हुए। कैसे विजयी हुए ? केवल साधन के आधार पर नहीं। यह जो कहा गया है कि विजय, उपकरण के आधार पर नहीं, मानसिकता के आधार पर होती है।

विजयी विश्वास

तीसरा प्रसंग तो अभी साढ़े तीन सौ साल पहले हुआ शिवाजी के समय हुआ। हिन्दुस्तान की सारी आसुरी शक्तियां एकत्रित थीं। उनके पास विशाल खजाना था। बड़ी–बड़ी सेनाएँ थी और तय करके आए थे कि हमारा राज्य सारे हिन्दुस्तान पर होगा।

उसका विरोध करने के लिए खड़े हुए लोग साधन सम्पन्न नहीं थे और इस कारण आप कहें कि उनके खिलाफ आप कैसे खड़े हो सकते है ? जैसा आज हम कह रहे हैं कि मजदूर आत्महत्या कर रहे हैं, किसान आत्महत्या कर रहे हैं, तो हम उसका विरोध करेंगे। लेकिन प्रश्न उठना स्वभाविक है कि इतने बड़े शत्रु का हम विरोध कैसे करेंगे ? मरने के अलावा और क्या रास्ते हैं ? आत्महत्या करने के अलावा और कोई चारा नहीं है। मैं कहता हूँ इसके बारे में थोड़ा सोचना चाहिए। इसमें भी रास्ता है। साधनों के आधार पर नहीं है, मानसिकता के आधार पर है, इच्छाशक्ति के आधार पर है। और आज यही मानसिकता हमारे लिए बहुत उपयोगी है। उन्होनें कहा कि हमारी ताकत के अनुसार तो हमें मरना पड़ेगा। हम मरने की तैयारी करें – "धर्मासाढी मरावे" (धर्म के लिए मरने की तैयारी करें)। किन्तु मरने की तैयारी करें उस समय यह सोचना कि अरे बाप अब क्या होगा यह नहीं चलेगा। तो उन्होनें कहा कि मरते–मरते उनको मारना है – 'मारिता मारिता ध्यावे राज्य आपुण'। और इस तरह सबको मारते–मारते अपना राज्य छीन कर लाना। ये रामदास स्वामी का कहना

हैं। हम जानते हैं कि आज हम आत्महत्या कर रहें हैं लेकिन मरते–मरते मारने का काम करना है। हम जितने दुश्मन हैं सबको मारने का काम करेंगे, मरते–मरते भी अपना राज्य, अपना स्वत्व छीन कर ले आएंगे और हम यशस्वी होंगे। आज से साढ़े तीन सौ साल पहले इसी मानसिकता से वे लोग यशस्वी हुए थे। **आज भी हम इसी मानसिकता से यशस्वी होंगे। इस मानसिकता का काम हम राष्ट्र जागरण से करेंगे। इस दृष्टि से हमें कहना चाहिए कि हम गरीब होंगे, लेकिन चूंकि हमारे इरादे नेक हैं, हम ही यशस्वी होने वाले है। ये जो सारे राक्षस हैं, उनको हम खत्म करने वाले हैं। यह आत्मविश्वास हमारे अन्दर होना चाहिए।**

अमेरिका पतन की ओर

वास्तव में ये लोग जितना देखते हैं उतने बलवान नहीं है। आपको यह जानकार आश्चर्य होगा। अमरीका नीचे आ रहा है। अलग–अलग लोग उसके दुश्मन बन रहे हैं। यूरोपीयन कम्युनिटी के किसान, मजदूर इनके खिलाफ है, दक्षिण–पूर्व एशिया की जनता इनके खिलाफ है, चाइना, जापान इनके खिलाफ है, खुद अमरीका का मजदूर आंदोलन उसके खिलाफ है और जो उपभोक्ता आंदोलन है वह भी इनके खिलाफ है। अमरीका में भी मानवतावादी लोग हैं उन्होनें अपना फोरम बनाया है। फोरम का नाम है – 'द अदर्स इकोनॉमिक समिट' (The Others Economic Summit) जहाँ–जहाँ सरकार की मीटिंग होती है वहाँ यह 'समिट' जाती है और सरकार के निर्णय के खिलाफ प्रस्ताव पास करती है। विरोध बढ़ रहा है और अमरीका नीचे जा रहा है।

स्वातंत्र्य प्राप्ति के पश्चात् जितनी सरकारें आयी, उनको ये धौंस देते रहे –'हम जो कहते हैं, वही करो, नहीं तो हम आर्थिक प्रतिबन्ध लगा देंगे।' वास्तव में उनकी धौंस में कोई ताकत नहीं हैं लेकिन वे धौंस देते है. और अभी तक की सारी सरकारें इस धौंस के अन्दर आकर उनके कहने के मुताबिक चली। हमें आशा थी कि आज की सरकार देशभक्त

लोगों की है यह इनके धौंस के आगे झुकेगी नहीं। ये भी झुक रहे हैं जिस सामने ये झुक रहे है वे क्या कर सकते हैं ? अमरीका की कितनी ताकत है ? आज वो धौंस दे रहे हैं हम आर्थिक प्रतिबन्ध लगाएँगे। भारत की जनता की ओर से मैं कहना चाहता हूँ कि आर्थिक प्रतिबन्ध हम लगाएँगे – धौंस आप किसको दे रहे हैं ? वास्तव में आर्थिक प्रतिबन्ध के कारण ज्यादा से ज्यादा एक साल हमें कष्ट का सामना करना होगा। हमें पेटी कसना पड़ेगा। हमें पेटी कसने की आदत है। अगर एक साल तक हमने पेटी कस ली तो अमरीका को नीचे आना पड़ेगा। और इसका कारण है भारत को अमरीका की जितनी ज़रूरत है उससे अधिक अमरीका को भारत की जरूरत है और इस तरह से एक साल तक हम राह देखें तो अमरीका को झुकना पड़ेगा। अमरीका का सामान्य नागरिक एक साल तक कष्ट नहीं सह सकता है। जो अमरीका–वियतनाम के सामने झुक गया था। वह हर जगह झुक जाता है। क्यों झुक जाता है ? अमरीका का नागरिक ज्यादा देर तक लड़ाई बर्दाश्त नहीं कर सकता।

इच्छाशक्ति की आवश्यकता

हमारे यहाँ सभी नागरिक कुछ न कुछ बचत करता है। थोड़ा सा कमाया तो भी थोड़ा सा पैसा बचाता है। अमरीका में आगे के तीन साल के क्रेडिट कार्ड को खत्म करके रखने वाले बहुत सारे लोग है। वे लोग एक साल तक राह नहीं देख सकते। हम भारत सरकार को कह दें कि अपनी इच्छा शक्ति को जाग्रत करो। जनता आपके पीछे रहेगी। इच्छा शक्ति के कारण भारत सरकार ने यदि उनके धौंस को नहीं माना तो एक साल में उनको नीचे आना पड़ेगा।

हमारे यहाँ एक लोककथा है। लोककथा ऐसी है कि एक पति–पत्नी थे। पति हमेशा अपनी पत्नी को धौंस देता रहता था कि फलाने काम करो, नहीं तो मैं घर छोड़कर चला जाऊँगा। अब बहुत काम ऐसे होते हैं जो पत्नी नहीं करना चाहती थी। लेकिन पति धौंस देता था कि मैं घर छोड़कर चला जाऊँगा तो बेचारी बात मान लेती थी। यह बात

उसने एक दिन अपनी एक सहेली से बताई। सहेलियों ने कहा कि वह केवल धौंस दिखाता है, धमकी देता है, चिन्ता मत करो। एक दिन जब तुम्हारा पति कहें कि मैं घर छोड़कर चला जाऊँगा तो तुम कहना कि जाओ। तुम्हारा कौन सामान बाँधना है, कपड़े वगैरह बताओ – मैं बाँध देती हूँ। पत्नी ने पूछा कि ऐसा कहूँ पति से ? सहेली ने कहा – हाँ। एक दिन पति जब आया। उसने पत्नी से कुछ काम करने को कहा और धौंस दिखाया कि यह कार्य तुरन्त होना चाहिए नहीं तो मैं घर छोड़कर चला जाऊँगा। पत्नी ने शांत भाव में कहा – आप जा सकते हैं। आपको जाते समय कौन–कौन कपड़े चाहिए, बताइए ? मैं गठरी बाँध देती हूं। यह उसके लिए अनपेक्षित था। उसने सोचा ही नहीं था कि पत्नी ऐसा कहेगी। कहा ठीक है ये कपड़े दो – वह कपड़े दो, मैं जाता हूँ। पत्नी ने गठरी बांध दी। उसको चाय पिलायी एवम् विदा कर दिया।

पति जब घर के बाहर निकला तो उसका पैर आगे नहीं बढ़ रहा था। सोचता था, कहाँ जाऊँ ? पहले से कुछ सोचा तो था नहीं। फिर सोचा कि थोड़ा आगे जाता हूँ पत्नी को पश्चाताप होगा तो बुला लेगी। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। गाँव न छोड़ना पड़े इसीलिए उसने गाँव के बाहर के मन्दिर पर जाकर बैठ गया। वह बैठकर सोचने लगा, उसे खोजने उसकी पत्नी क्यों नहीं आ रही हैं ? चौबीस घंटे बीत गए, फिर भी उसकी पत्नी नहीं आई – उसका धीरज टूट गया। शाम को उसके घर की गाएँ और भैंस चारा खाकर उसी रास्ते से घर जा रही थी। चूँकि उसका धीरज टूट चुका था, वह अपनी भैंस की पूँछ पकड़कर घर जाने लगा ओर जाते समय मंत्र के सामान जपने लगा कि भैंस मुझे जबर्दस्ती घर क्यों ले जा रहे हो, मैं घर नहीं जाना चाहता। ऐसा कहते–कहते वह अपने घर चला गया। मैं आपको बताता हूँ कि भारत सरकार ने थोड़ी इच्छा शक्ति दिखाई तो मिस्टर बुश को हम अपनी ताकत का अंदाजा करा सकते हैं।

डब्ल्यू.टी.ओ. : आर्थिक साम्राज्यवाद का औजार

आज हम सभी यह सोच रहे हैं कि डब्ल्यू.टी.ओ. क्या है ? यह फ्रॉड – धोखेबाज, बेईमान देशों का यह एक क्लब है। लोग हमें कहते हैं डब्ल्यू.टी.ओ. के बाहर मत आइए। अरे कौन है यह वर्ल्ड ट्रेड ऑरगनाईज़ेशन ? विकसित देशों ने, गोरे देशों ने गैर गोरे देशों पर अपना आर्थिक साम्राज्य बिछाने के लिए इस संगठन का निर्माण किया गया। महातिर मुहम्मद ने बहुत अच्छा सुझाव दिया था। उसने सुझाव दिया था कि विश्व व्यापार संगठन में जितने विकासशील देश हैं, उनको इकट्ठा होकर अपना एक क्लब बनाना चाहिए। आज क्या होता है डब्ल्यू.टी.ओ. में, दादागिरी चलती हैं। ये गोरे देश गैर–गोरे देशों पर दादागिरी चलाते हैं। विकासशील देशों के ब्लाक को यह बताना चाहिए कि हम गोरे देशों की दादागिरी नहीं चलने देंगें। यदि वे मानते नहीं तो हम डब्ल्यू.टी.ओ. छोड़ देंगे और अपना अलग संगठन खड़ा करेंगे। भारतीय मजदूर संघ का भी यह कहना है कि वे डब्ल्यू.टी.ओ. में दादागिरी छोड़ने वाले नहीं। इसीलिए विकासशील देश एक क्लब बनाने के लिए तैयार रहे। यह हमारी जानकारी में है। यह कपोल कल्पना नहीं हैं लेकिन उनको भारत जैसे किसी बड़े देश का नेतृत्व चाहिए। यदि यह नेतृत्व करने भारत आगे आता है तो सारे विकासशील देश उसके साथ आ जायेंगे। इस तरह का ब्लॉक बनाना चाहिए। इस तरह का ब्लॉक बनाते हुए अपने प्रयास पर भारत को एक और डब्ल्यू.टी.ओ. अर्थात् विकासशील देशों का एक नया प्रतिस्पर्धी विश्व व्यापार संगठन, खड़ा करना चाहिए। ताकि यह व्यापार संगठन उनको चुनौती दे। उनकी हालत अच्छी नहीं है। न अमरीका की हालत अच्छी है, न यूरोप की हालत अच्छी है। यदि हम हिम्मत के साथ खड़े हुए तो कोई कारण नहीं कि हम अपने हितों की रक्षा न कर सकें।

इस संगठन को खड़ा करने में आर्थिक समस्या नही है, मानसिक समस्या है। यदि भारत सरकार मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार होकर दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ यह काम करती है तो हम सभी को दबा सकते हैं।

इच्छा शक्ति नष्ट न हो। नष्ट होने का कारण क्या है ? अरे 100 करोड़ लोग आपके पीछे है। इनकी इच्छा शक्ति गँवा बैठे, खो बैठे, तो क्या कारण हो सकता है ? आज हम सरकार से प्रार्थना करेंगे कि अपनी इच्छा शक्ति जाग्रत करे और उनके खिलाफ खड़े हो जाएं। सरकार उनके खिलाफ खड़ी होती है तो हम सरकार का साथ देंगे। सरकार उसको प्रश्रय देती है तो हम सरकार का विरोध करेंगे। यह हमारी स्पष्ट नीति है। हम मांग करते हैं, दूसरा डब्ल्यू.टी.ओ. – प्रतिस्पर्धी विश्व व्यापार संगठन को सरकार खड़ा करे। सरकार नहीं खड़ा करती है तो हम लोग खड़ा करेंगे।

<u>युद्धम देहिः</u>

इस दृष्टि से आज से केवल चार साल पहले भारतीय मजदूर संघ की रैली में बात की गई थी। तब मजदूर अकेला था, आज उसके कंधे से कंधा लगाकर किसान खड़े है, लघु उद्योग वाले खड़े है। बीमारी एक ही है कि सब लोगों को सरकार ने स्वयं अपना दुश्मन बना लिया है। वे सारे हमारे मंच पर आ सकते हैं। भारत की देशभक्त जनता विश्व बैंक, आई.एम.एफ. और विश्व व्यापार संगठन को ललकार कर कह सकती है कि लड़ाई के लिए तैयार हो जाओ। कमजोर इच्छा शक्ति होने के कारण आपने उनकी कई बातें मान ली तो अब भारत की जनता आपकी बातें नहीं मानेगी। **हमें लड़ाई के लिए तैयार हो जाना चाहिए। इसीलिए हम कहेंगे कि जन शक्ति जाग्रत हो। आज सर्वसाधारण लोगों को, किसानों को, नवयुवकों को, गरीबों को, व्यापारियों को एक मंच पर खड़ा हो जाने की जरूरत है। और राष्ट्रविरोधी, गरीब–विरोधी, मजदूर–विरोधी, किसान–विरोधी शक्तियों को हम ललकारें कि हम अब तैयार हैं – युद्धम् देहि। युद्ध के लिए तैयार हो जाओ – युद्धम् देहि। हमारा नारा यही होगा युद्धम् देहि।** देखेंगे कि लड़ाई में क्या होता है।

स्वदेशी आन्दोलन

प्रारम्भ से ही विरोध

स्वदेशी जागरण मंच यह नाम अभी सब लोग जानने लगे हैं। किन्तु इसका ग्रह योग कुछ ऐसा रहा कि इसके स्थापना के पूर्व से ही इसका विरोध होता रहा। मैं बंगाल में गया था, वहां भाषण में कहा था कि हम स्वदेशी जागरण मंच शुरू करने वाले हैं। प्रेस में भी वह भाषण छपा था, तुरन्त कम्यूनिस्टों ने प्रतिक्रिया प्रकट की, अरे यह संघ वाले हैं, आर. एस. एस. वाले हैं इनको देश और स्वदेशी का क्या पड़ा है इनको पैसे दिए होंगे उद्योगपतियों ने। काहे के लिए पैसे दिए होंगे कि तुम स्वदेशी का प्रचार करो, विदेशी का बहिष्कार करो और इसके कारण विदेशी माल जब पूरा हट जाएगा, स्वदेशी मार्केट से, तो फिर हम लोगों को विदेशी कॉम्पीटीटर न होने के कारण उपभोक्ताओं का, ग्राहकों का, अनाप शनाप शोषण करना हमारे लिए सम्भव होगा चाहे जितना मुनाफा हम कमा सकेंगे, इसीलिए उद्योगपतियों ने इनको पैसा दिया है।

बाजार भाव सम्बन्धी नीति

इसके तीसरे ही दिन स्वदेशी जागरण मंच की स्थापना हुई उसमें कुछ प्रस्ताव पारित हुए कि आज हम स्वदेशी जागरण मंच की स्थापना कर रहे हैं, इसका उद्देश्य पूरा होने तक काम करता रहेगा, और उसमें एक प्रस्ताव पारित किया कि मार्केट में आनी वाली हर एक वस्तु की कीमत **"कॉस्ट ऑफ प्रोडक्शन"** उत्पादन खर्चा उस पर लिखा जाना चाहिए।

लागत मूल्य और प्राइस पॉलिसी

उत्पादन खर्चा लागत खर्चा ऐसा है कि हमारे शास्त्रों में प्राइस पॉलीसी है, जिस समय ग्रीस में एरिसटोटल प्राइसीस एथिकल है या

अनएथिकल है इसकी चर्चा कर रहे थे उस समय हमारे यहां प्राइस पॉलीसी निश्चित हुई थी। **"येन व्ययेन संसिद्धः तद व्ययः सत्य मूल्यकम्"** कि इसकी रियल प्राइस क्या है ? **येन व्ययेन संसिद्धः** "कॉस्ट ऑफ प्रोडक्शन इस द रियल प्राइस" किन्तु रियल प्राइस हमेशा मिलती है कि नहीं, कभी कम मिलती है, कभी ज्यादा मिलती है, किस आधार पर ? **"सुलभासुलभः वाच्य अगुणत्व गुणसंश्रयी, यथा कामान् पदार्थानाम् अर्घम् हिनाधिकम् भवेत्"** मूल्य कभी कम होता है, कभी ज्यादा होता है, काहे के आधार पर **"सुलभासुलभः वाच्य"** वो सुलभ यानि प्लेन्टी और स्केयरसिटी **"अगुणत्व गुणसंश्रयी"** यूटिलिटि और नॉनयूटिलिटि, डिग्री ऑफ एवेलेबिलिटी और डिग्री ऑफ यूटिलिटि इसके आधार पर और कम अधिक होता है, यह प्राइस पॉलीसी हमारे पहले से थी। हम लोगो ने प्रस्ताव पारित किया, कि मार्केट मे आने वाली कोई भी वस्तु चाहे देशी उद्योगपति की हो, विदेशी उद्योगपति की हो, उसकी कॉस्ट आफ प्रोडक्शन घोषित होनी ही चाहिए। इसमें क्या होता है, कॉस्ट ऑफ प्रोडक्शन जब घोषित होती है, उस पर लिखी रहती है तो फिर अनाप शनाप मुनाफा नहीं कमा सकते, हां कुछ प्रोफिट मार्जिन रहनी चाहिए यह तो सभी मानते हैं प्रोफिट मार्जिन रिजनेबल होनी चाहिए। लेकिन आज जो होता है कि चार रूपये की चीज चार सौ रूपये में बेची जाती है ऐसा नहीं हो सकेगा, तो यह हमने प्रस्ताव पारित किया उसके बाद कम्यूनिस्टों की तूती बन्द हो गयी। उनको पता ही नहीं था कि हमारे शास्त्र में कुछ है उन्होनें शास्त्र पढ़े ही नहीं थे, और इसीलिए वो निन्दा कर रहे थे, किन्तु उनका बोलना बन्द हो गया।

स्वदेशी को लेकर आपत्तियाँ

स्वदेशी जागरण मंच की स्थापना होने वाली थी, उसके पिछले दिन हमारे कुछ मित्र हमारे पास आए। कहा ठेंगड़ी जी स्वदेशी जागरण मंच शुरू करने वाले हैं, तो हमने कहा "हां"। माफ करें लेकिन नहीं करेंगे तो अच्छा होगा। हमने कहा "क्यों ?" आप हमारे हैं सब लोग जानते है, पर आप ही स्वदेशी की बात करेंगे, तो हमारी पोसीशन बहुत

खराब हो जाएगी। लोग कहेंगे कि ये लोग हिन्दुस्तान् को 16वीं शताब्दी = ले जाना चाहते हैं, दुनिया 21वीं शताब्दी की तरफ जा रही है, यह 16वीं शताब्दी में ले जाना चाहते है।

सोफिस्टिकेटिक लोग और स्वदेशी

और आप जानते है वह लीडर थे बोले हमारे कान्स्टीटयून्सी में बहुत सोफिस्टीकेटिड लोग रहते हैं, उनको हम कहे कि साहब कोलगेट नहीं और प्रोमिस या और कुछ इसका इस्तेमाल करो, तो हमको हॅसेगे। मैंने कहा कि ऐसा है आपकी कान्स्टीटयून्सी का सबसे ज्यादा सोफिस्टीकेटिड आदमी कौन है जरा सोचिए मैने कहा मैं जानना चाहता हूं पंडित मोतीलाल जी नेहरू उस समय के हिन्दुस्तान के सबसे ज्यादा सोफिस्टीकेटिड आदमी माने गए थे, ऐसा प्रवात था कि उनके कपड़े पैरिस से धुलकर आते थे, उनसे ज्यादा सोफिस्टीकेटिड आदमी उस समय कोई नहीं था। उनके शरीर पर पूज्य महात्मा गांधी ने खद्दर चढ़ाई, तो मोतीलाल जी जिनके कपड़े पेरिस से धुलकर आते थे, उनके शरीर पर वे खद्दर कैसे चढ़ा सके? तो मोतीलाल नेहरू से ज्यादा सोफिस्टीकेटिड आदमी आपके कॉन्स्टीटयून्सी में कोई है क्या? तो बोले "वो तो नहीं है"।

विदेशी का बहिष्कार नपकारात्मक ?

और बोले "एक और प्रार्थना है"। "क्या है ?" उन्होनें कहा कि बहिष्कार शब्द बड़ा नेगेटिव दिखता है, यह ईज्जतदार शब्द नहीं है यह नेगेटिव शब्द तो आप छोड़ दीजिए, हमने कहा कि आपके कॉन्स्टीटयून्सी में बहुत इज्जतदार लोग दिखाई देते हैं, लेकिन आपको मालूम है क्या कि 1906 में कलकत्ता में जब कांग्रेस हुई थी, उस समय अध्यक्ष दादा भाई नारोजी इन्होने चतुसूत्री दी थी स्वराज्य राष्ट्रीय शिक्षण, स्वदेशी और बहिष्कार तो दादा भाई नारोजी से ज्यादा सोफिस्टीकेटिड आदमी आपकी कॉन्स्टीटयून्सी में कितने है जरा बताइए ?

स्वदेशी में दृढ़ विश्वास आवश्यक

फिर हमने उनको कहा कि दिक्कत ये नहीं है, दिक्कत यह है कि तुम्हारे अन्दर कनविकशन नहीं है, कि स्वदेशी से ही उद्धार होगा, तुमको ऐसा कनविकशन नहीं है और इसके कारण लोगो को बताना तुम्हारे लिए कठिन हो जाता है, तो प्रारम्भ से ही स्वदेशी के बारे में ऑब्जेकशन्स आते गए।

स्वदेशी की अवधारणा

आखिर स्वदेशी का अवधारणा क्या है ? वास्तव में यह मानना भूल है कि 'स्वदेशी' का सम्बन्ध केवल माल या सेवाओं से है। यह तो फौरी किस्म की सोच होगी, **स्वदेशी का मतलब है, देश को आत्मनिर्भर बनाने की प्रबल भावना, राष्ट्र की सार्वभौमिकता और स्वतंत्रता की रक्षा की भावना तथा समानता के आधार पर अंतरराष्ट्रीय सहयोग का स्वीकार।** ऐसा है, कि एक साल, ये ही 12–13 साल पहलें की बात है जिस समय जापान अमेरिका के प्रभाव क्षेत्र में था, आज नहीं है, आज बराबरी का है, लेकिन उस समय प्रभाव में था, उस समय केलीफोर्निया में बहुत संतरे हुए "ओरेन्जिस", तो अमेरिका ने जापान को कहा, कि आपके यहाँ महिलाओं को संतरे बहुत पसन्द आते है, तो हमारे संतरे आपकी मंडी में भेजेंगे, जापान ने कहा कि आपके संतरे भेजने की आवश्यकता नहीं है, किन्तु अमेरिका ने कहा कि नहीं हम भेजने ही वाले है, उस समय जापान को मानना पड़ा, जापान की मंडिया अमेरिकन संतरे से भर गई थी, लेकिन आपको आश्चर्य होगा कि सभी मंडियों में बहुत संतरे होते हुए भी एक भी संतरा बेचा नहीं गया, पूरे जापान में। यह बात सही है कि जापानी महिलाओं को संतरे बहुत पसन्द हैं, तो भी एक भी संतरा बेचा नही गया इसका नाम स्वदेशी है।

कुछ 15–16 साल पहले ग्रेट ब्रिटेन की महारानी ने सोचा कि भई ब्रिटेन की जो कार है वो ज्यादा सुविधाजनक नहीं है, उससे जर्मनी की

कार ज्यादा सुविधाजनक है, तो हम जर्मनी की कार खरीदेंगे, यह बात फैल गई, लोगो ने विरोध किया। लोगो ने कहा कि महारानी साहिबा आप हमारा प्रतीक है, कॉन्स्टीटयूशनल मोनार्क है, आप हमारे प्रतिनिधि भी है आप ही अगर देशी कार छोड़कर विदेशी कार में जायेंगे, तो हमारे देश की नाक कट जाएगी। आपने ऐसा नहीं करना चाहिए। महारानी को जर्मन कार नहीं लेने दी गई ब्रिटिश कार में ही उनको प्रवास करना पड़ा।

अब देखिए कि विएतनाम के प्रेसिडेंट हो ची मिह्न भारत में आए थे जैसे वो पालम एयरपोर्ट पर हवाई जहाज से उतरे तो उस समय लोगों को परमिशन दी गई थी कि वो हवाई जहाज तक जा सकते हैं, तो प्रेस कारेसपोन्डेंट हवाईजहाज तक गए। वो जब उतर रहे थे, तो कुछ कारेसपोन्डेंट ने देखा और उनको आश्चर्य हुआ कि उनकी पेंट को यहां सिलाई थी, सिलाई थी का मतलब है कि वो फट गई होगी, तो बाद में लोगो ने पूछा कि आप तो एक राष्ट्र के राष्ट्रपति है, आपकी पेन्ट ऐसे फटी हुई, सिलाई हुई ऐसी आपकी पेन्ट क्यों हैं, उन्होनें जवाब दिया "माई कन्ट्री कैन अफोर्ट ओन्ली दिस मच", यह स्वदेशी है।

गांधी इरविन पेक्ट के समय चर्चा चल रही थी, दोपहर में चाय का समय था, वाइसराय साहब के लिए चाय आई, गांधीजी के लिए नींबू पानी आया। वाइसराय देख रहे थे कि गांधीजी क्या करते हैं, उन्होनें अपने इसमें से एक पूड़ी निकाली, और ऐसे आराम से खोलकर नींबूपानी में डाल दिया, वाइसराय साहब ने पूछा कि '"यह क्या है?", बोले कि "आपके नमक कानून का उल्लंघन करते हुए मैने जो नमक बनाया था, उस नमक की पूड़ी मैं इसमें डाल रहा हूं", यह स्वदेशी है।

चीन और कोरिया की सरकारों ने जब माईकल जैक्सन को इस बिना पर अपने देश में आने नहीं दिया कि उसका शो सांस्कृतिक हमला है, तब वे अपने स्वदेशी भावना ही जाहिर कर रहे थे। यह घटना यह भी जताती है कि 'स्वदेशी' भौतिक वस्तुओं तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह

एक व्यापक आधार वाली विचारधारा है जो राष्ट्रीय जीवन के तमाम पहलुओं को खुद में समेटती है।

देशप्रेम की साकार अभिव्यक्ति – स्वदेशी

तो स्वदेशी, यह भावना है, केवल आर्थिक बात नहीं हैं, और इस भावना के आधार पर ही स्वदेश ऊपर जा सकता है। "देशप्रेम की साकार और व्यावहारिक अभिव्यक्ति है स्वदेशी"। देशप्रेम का अर्थ दुनिया से अलग–थलग रहना नहीं है, खासकर हमारी परम्परा में जो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के आधार पर टिकी है। इसके मुताबिक मानवीय चेतना के स्तर पर अंतरराष्ट्रीयता, राष्ट्रवाद का ही विस्तार है। यह बात मार्के की है कि साम्राज्यवादी शक्तियां अक्सर देशभक्ति की संकीर्णतावाद करार देती है। मिसाल के तौर पर दूसरे महायुद्ध के बाद जब यह स्पष्ट हो गया कि अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों के दबाव के कारण साम्राज्यवादियों को अपने उपनिवेशों को आजाद करना ही होगा तो उन्होनें बदले माहौल में अपने हितों की यथासंभव सुरक्षा के लिए मुहिम छेड़ दी। भारत में वायसराय के कुछ एक्जिक्यूटिव कौंसिलर उनके साधन बने। पूर्ण स्वराज को संकीर्णतावाद बताते हुए सर सी. पी. रामस्वामी अय्यर ने कहा कि अंतरराष्ट्रीयतावाद के नए युग में "हमारा लक्ष्य स्वाधीनता नहीं, परस्पर निर्भरता होना चाहिए"। डॉ. मनमोहन सिंह के उदारीकरण ओर भूमंडलीकरण के तर्क रामस्वामी के परस्पर निर्भरता वाले तर्कों के ही आधुनिक रूप हैं।

देशभक्त अंतरराष्ट्रीयतावाद के खिलाफ नहीं है। राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता का उनका आग्रह अंतरराष्ट्रीय सहयोग के विरूद्ध नहीं जाता है, बशर्ते उसका आधार समानता हो और उसमें हर देश के स्वाभिमान का सम्मान किया जाए। भूमंडलीकरण के पैरोकारों से उनका विरोध अलग और ज्यादा ठोस सवाल पर है।

'स्वदेशी वाले' इस विचार को मानने के लिए तैयार नहीं है कि विकास का पश्चिमी मॉडल सार्वभौम है और दुनिया भर के लोगों को उसकी नकल करनी चाहिए। हालांकि वे सांस्कृतिक आदान–प्रदान को स्वीकारते हैं, मगर इस बात पर जोर देते हैं कि हर समाज की अपनी संस्कृति होती है और हर देश की प्रगति और विकास के मॉडल का उस देश के सांस्कृतिक मूल्यों के साथ तारतम्य होना चाहिए। आधुनिक बनने का मतलब पश्चिमीकरण नहीं है। आधुनिकीकरण के क्रम में राष्ट्रीय संस्कृति की भावना का आदर होना चाहिए। वे पश्चिम के हित में विभिन्न संस्कृतियों और राष्ट्रीय पहचानों को गड्ड–मड्ड कर देने की कोशिशों का विरोध करते हैं।

आधुनिक पश्चिमी तकनीक और आर्थिक प्रणाली के साथ एक ऐसी सभ्यता आ रही है, जो गैर–पश्चिमी सभ्यताओं के अनुकूल नहीं है। विरोध का यह मूल आधार है।

तो स्वदेशी, यह भावना है, केवल आर्थिक बात नहीं हैं, और इस भावना के आधार पर ही स्वदेश ऊपर जा सकता है। और इसीलिए पंडित दीनदयाल जी उपाध्याय ने भारतीय जनसंघ के विजय वाड़ा सेशन में जो प्रिंसिपल्स एण्ड प्रोग्राम दिया था, उसमें प्रमुख बात रखी थी, कि नेशनल सेल्फ रिलाइंस, राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता, यह ठीक है कि एकदम सम्पूर्ण आत्मनिर्भरता नहीं आ सकती, कभी–कभी विदेशों से भी लेन–देन करनी पड़ेगी, लेकिन यह लेन–देन बराबरी के नाते होनी चाहिए इक्वल फुटिंग पर होनी चाहिए, ऐसा नहीं कि वो हमको डिक्टेट करें और हम उनके सामने आत्मसमर्पण करें ऐसा नहीं, बराबरी के नाते होना चाहिए। यह बात पंडित दीनदयाल जी ने कही थी।

स्वदेशी मंच की सरकार के प्रति भूमिका

अभी स्वदेशी जागरण मंच के बारे में तरह तरह के गलत ख्यालात प्रचलित है। एक इंग्लिश न्यूजपेपर ने ऐसा लिखा था कि क्या स्वदेशी

जागरण मंच आज के सरकार के लिए ओपोजिशन पार्टी का रोल प्ले करना चाहती है, तो सरकार के विषय में हमारी भूमिका क्या है ? यह प्रश्न उपस्थित हुआ था। स्वदेशी जागरण मंच गैर राजनीतिक नॉन पोलिटिकल है। हमारे यहां संविधान है संविधान के अन्तर्गत चुनाव होते है और चुनाव में निर्वाचित जो भी सरकार होगी किसी भी पार्टी की रहे, वह राष्ट्रीय सरकार हम मानते है और राष्ट्रीय सरकार के साथ हमारा रूख क्या है ? तो वह सभी सरकारों के साथ किसी भी पार्टी की सरकार रहे सभी सरकारों के साथ हमारा एक ही रूख रहेगा और वो क्या है ? रिस्पोन्सिव को–ऑपरेशन। रिस्पोन्सिव को–ऑपरेशन का मतलब होता है, कि किसी भी पार्टी की सरकार हो हम पार्टी की फिक्र नहीं करते, किन्तु सरकार की नीति यदि स्वदेशी के अनूकुल रहेगी तो स्वदेशी जागरण मंच सरकार का समर्थक होगा, स्वदेशी के प्रतिकूल रहेगी यां विरोधी रहेगी तो स्वदेशी जागरण मंच सरकार का विरोध करेगा, इस तरह से उनकी पॉलीसी क्या है यह देखकर हम समर्थन यां विरोध तय करते है कौन सी पार्टी पॉवर में है यह देखकर हम तय नहीं करते।

उपनिवेशवाद का पतन, नव–उपनिवेशवाद का अभ्यूदय

अब देखिए भारत सरकार ने पिछले दशक से कुछ गलत नीति को स्वीकार किया। लोगो के भी ध्यान में एकदम नहीं आया इसका कारण था आज जो नीतियँा चल रही है विदेशियों की, लोग सोचते हैं कि उनका प्रारम्भ अप्रेल 1948 में जब "जनरल एग्रीमेन्ट ऑन टैरिफ एण्ड ट्रेड" निर्माण हुआ तबसे यह नीति बनी ऐसा लोग सोचते हैं ऐसा नहीं है। दूसरा महायुद्ध समाप्त हुआ 6 जून 1945 को जनरल आइसन हावर की सेनाएं यूरोपियन कॉन्टीनेन्ट पर आ गयी, तय हुआ कि हिटलर हारने वाला है, मित्र राष्ट्रों की विजय होगी तभी से वहां के लोगों ने सोचना शुरू किया हमारे यहां तो राजनेता केवल कल के चुनाव की ही बात सोचते हैं, उन्होनें बहुत दूर की बात सोची, क्या सोचा ? उन्होनें सोचा कि हिटलर तो हार जाएगा हमारी विजय भी होगी लेकिन, अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थित ऐसी है कि हमारे अण्डर जो देश है, क्योंकि सारे साम्राज्यवादी थे, क्या इंग्लैण्ड

क्या अमेरिका क्या फ्रांस सभी साम्राज्यवादी थे, हमारे अण्डर जो उपनिवेश कॉलोनीज है उनको स्वातन्त्रय देना हमारे लिए बाध्य हो जाएगा क्योंकि उनको अपने कब्जे में रखना हमारे लिए सम्भव नहीं हैं, उनको स्वातन्त्र्य देना पड़ जाएगा किन्तु उसके कारण एक तकलीफ पैदा हुई साम्राज्यवादी देशों की समृद्धि ऊपर से चकाचौंध करने वाली दिखती थी किन्तु ये साम्राज्यवादी देश अपने पैरो पर खड़े नहीं थे, अपने उपनिवेशों का शोषण करते हुए वह समृद्ध दिखाई देते थे।

शोषण का मतलब संक्षेप में मैं बताता हूं जैसे हमारे विदर्भ में कपास है, अब ब्रिटिश सरकार थी, तो ब्रिटिश सरकार कम से कम कीमत में किसानों से कपास खरीदा करती थी, इंग्लैण्ड ले जाती थी वहां मेन्चेस्टर, लेंकाशायर में कपड़ा बनाती थी, कपड़ा बनाने के बाद हिन्दुस्तान में लाती थी और ज्यादा से ज्यादा कीमत में वह कपड़ा बेचा जाता था। वहां एक कच्चा माल कम से कम कीमत में लेना, पक्का माल ज्यादा से ज्यादा कीमत में बेचना, इस तरह का शोषण इसके आधार पर वह बड़े समृद्ध दिखते थे, लेकिन उनके सामने सवाल आया, कि देश जब स्वतंत्र हो जाएंगे, तो कौन सा स्वतंत्र देश अपना शोषण करने देने के लिए तैयार हो जाएगा, कोई नहीं तैयार होगा, इसके लिए क्या किया जाए उनकी मानसिकता बनाई जाए, अभी से प्रोपेगेण्डा शुरू किया जाए।

पूंजी और टेक्नोलोजी का दुष्प्रभार

तो 1948 से नहीं तभी से प्रोपेगेण्डा शुरू हुआ जिसके कारण हमारे यहां के इंग्लिश एज्यूकेटिड लोगों के मन पर बहुत प्रभाव हुआ उन्होनें कहा कि कोई भी स्वतंत्र देश अपने पैरो पर खड़ा हो ही नहीं सकता जब तक हमारा इन्वेस्टमेन्ट वहाँ नहीं जाता, हमारा पैसा वहाँ नही जाता, तब तक वो अपने पैरो पर खड़ा नहीं हो सकता। और फिर कहा कि कोई भी स्वतंत्र देश जब तक हमारी टेक्नोलोजी नहीं लेता, हम जब तक टेक्नोलोजी नहीं देते, तब तक अपने पैरो पर खड़ा नहीं हो सकता। अब यह इतना प्रचार जो हुआ, और यह हमारे इंग्लिश एज्यूकेटिड लोगों

की विशेषता है कि वहां से जो प्रचार होता है उसका सबसे ज्यादा असर इनके उपर होता है सामान्य लोगो पर इतना नहीं होता इंग्लिश एज्यूकेटिड लोगो पर होता है उन्होनें भी मान लिया कि फोरेन इन्वेस्टमेन्ट के बगैर काम ही नहीं चलेगा, फोरेन टेकनोलोजी के बगैर काम ही नहीं चलेगा, वास्तव में यह तर्कशुद्ध भूमिका नहीं है।

अब देखिए, आज हम कहते हैं केपिटल फोर्मेशन हमारे यहां नही हुआ और उसके कारण और विदेश से पैसा यहां लाना ही पड़ेगा, हम समझ सकते हैं कि कई क्षेत्रो में विदेशी पैसे की आवश्यकता होगी, लेकिन विदेशी पैसा कहाँ लगेगा यह हम तय करेंगे। हमारी आवश्यकता क्या है ? अभी दोहा में यह बात आई थी यूरोपियन देशों ने कहा कि हमें पूरी दुनिया में "राइट टू इन्वेस्ट चाहिए" हम जहाँ चाहे वहाँ, जिस ढ़ंग से चाहे उस ढ़ंग से, इन्वेस्टमेन्ट कर सकें ऐसा अधिकार हमको मिलना चाहिए। अरे हमारे सम्प्रभुता का क्या होगा ? सोवेरिनिटी का क्या होगा ? हमारे देश में कहाँ हमें इन्वेस्टमेन्ट आपकी चाहिए हम तय करेंगे, कितनी इन्वेस्टमेन्ट चाहिए हम तय करेंगे।

अब यहां इन्वेस्टमेन्ट हो रही है कोका कोला, पेप्सी क्या हम लोग केवल ये जो पेय जल है, यह भी हम तैयार नहीं कर सकते ? टेक्नोलोजी बड़ी टेक्नोलोजी छोड़िए, किन्तु ये जो पेय जल की जो होती है, यह भी हम तैयार नहीं कर सकते। इसमें भी हमें फोरेन इन्वेस्टमेन्ट और फोरेन टेक्नोलोजी चाहिए। सच्ची बात यह है हम जहां चाहेंगे वहां वह टेक्नोलोजी देने वाले नहीं पैसा लगाने वाले नहीं है क्योंकि उसमें उनका मुनाफा नहीं है और वो अपनी अपडेट टेक्नोलोजी देकर अपना नुकसान नहीं करेंगे, उनके लिए यहां मुनाफा होता है वहां वह पैसा लगाएंगे।

पूंजी का सवाल

हमारे नेताओं ने कहना शुरू किया – कि साहब, लोग देश के लिए त्याग ही करने को तैयार नहीं तो हम क्या करें, हमको फोरेनर्स के

पास जाना पड़ता है। क्या यह बात सही है ? राजनेताओं ने कहा कि हर एक आदमी स्वार्थी है, इसके कारण अब फोरेनर्स के पास जाना बाध्य हो जाता है, बात ऐसी है कि हर एक आदमी स्वार्थी है यह सच हैं, किन्तु साथ ही साथ आवश्यकता पड़ने पर आदमी त्याग भी कर सकता हैं।

अब आप देखिए नेताजी सुभाष चन्द्र बोस दक्षिण एशिया में आए, वहां भारत से गए हुए व्यापारी थे, व्यापारी तो अपना मुनाफा कमाने के लिए, स्वार्थ के लिए ही गए थे लेकिन जब नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने स्वातन्त्र्य के नाम से आह्वान किया, तो लोगो ने अपना पैसा ही दिया इतना ही नहीं, तो महिलाओं को अपने अलंकार गहने बहुत पसन्द आते, वो भी नेताजी के चरणों में उन्होनें समर्पित किए, जो विशुद्ध स्वार्थ के लिए गए थे उन लोगों ने इतना बड़ा त्याग किया। क्यों ? क्योंकि को'ज़ था देश की स्वतन्त्रता और वो आह्वान करने वाला नेताजी सुभाष चन्द्र बोस जैसा पूर्ण स्वार्थत्यागी मनुष्य था इसीलिए लोगो ने पैसे दिए।

1965 के समय लाल बहादुर शास्त्री ने आह्वान किया, भाई बचत करो और एक दिन एक समय का भोजन छोड़ दो, सब लोगों ने छोड़ दिया। 1962 में चीन के आक्रमण के समय, 1971 में बांग्लादेश की लड़ाई के समय, सब लोगों ने देश के लिए त्याग किया, हमारे मजदूरों ने भी ओवरटाईम न लेते हुए ज्यादा घंटो तक काम किया, ये प्रेरणा कैसे हो सकती है ? वास्तव में जिस तरह से मनुष्य स्वार्थी है, यह सही है, उसी तरह ठीक आदमी ने ठीक ढ़ंग से यदि आह्वान किया तो लोग त्याग भी कर सकते हैं। किन्तु हमारे नेताओं की बात ऐसी है कि कहां कैसे अपील करना है? नेताओं को पता नहीं है, जैसे किसी सितार में यां किसी फिडल नें एक स्वर निकालने की क्षमता है, लेकिन किस तार को किस जगह छेड़ने से वह स्वर निकल सकता है, इसकी जानकारी इनको नही है इसीलिए क्या कर रहे है, इसीलिए सितार को यां फिडल को इधर–उधर, ैसा–वैसा छेड़छाड़ करते है, मालूम नहीं है कि किस तार को कहां छेड़ना है और फिर कहते हैं यहां से स्वर निकलता ही नहीं।

वास्तव में 1947 में ही, क्योकि हमारे देश में बचत की प्रवृति बहुत है, अमेरिका में बहुत सारे लोग ऐसे हैं जिन्होनें आगे के तीन साल का क्रेडिट कार्ड भी खत्म किया है, हमारे यहां उल्टा है गरीब से गरीब आदमी भी थोड़ा सा पैसा बचाता है, थोड़ा सा सोना बचा लेता है, जमीन में गाढ़कर रख देता है, बचत की प्रवृति है। और पहले से भी आह्वान किया होता कि "स्मॉल सेविंगस्" माने बचत यह देश के लिए करनी है लोग अवश्य करते और "केपिटल फोरमेशन" का सवाल बहुत मात्रा में हल हो सकता था, किन्तु इस तरह का आह्वान करने की हिम्मत नेताओं में नहीं थी, और नेताओं में इसका कारण है, कि जो अपनी ही तन्ख्वाह अपने ही हाथ से बढ़ा लेते, एम.पी. और एम.एल.ए अपने ही हाथ से बढ़ा लेते हैं और उनको यह कहने का साहस कैसे होगा कि लोगो को त्याग करना चाहिए। तो त्याग नहीं है यह, कहना गलत बात है।

टेक्नोलोजी का प्रश्न

अब टेक्नोलोजी की बात लीजिए, क्या मोर्डन टेक्नोलोजी के बारे में सरकार को जानकारी है ? वास्तव में विदेश में भी चर्चा चल रही है, कि "ऐवरी साईंटिफिक एड्वान्समेन्ट" यह हितकारक है या नहीं है। हिरोशिमा, नागासाकी यह उदाहरण जब उन्होनें देख लिए, तभी से उनके मन में आया कि "साईंटिफिक एड्वान्समेन्ट, टेक्नोलोजिकल एड्वान्समेन्ट" ज्यादा होगी तो उसके ऊपर कुछ नियंत्रण होना चाहिए, नहीं तो अणु युद्ध हो सकता है, न्यूक्लियर वार हो सकती है। और हिरोशिमा, नागासाकी की आवृत्तियां हो सकती हैं, नियंत्रण होना चाहिए, और इसीलिए वहाँ भी ऐसे शास्त्रज्ञ निर्माण हुए जिन्होनें कहा कि "देयर शुड बी टेक्नोलोजिकल ओमबर्शमेन्ट" टेक्नोलोजि पर नियंत्रण रखने वाला कोई न कोई एक बॉडी वहाँ होनी चाहिए ओमबर्शमेन्ट यानि नियंत्रण करने वाली बॉडी होनी चाहिए। और उस बॉडी में साईंटिस्ट को मत रखिए, टैक्नोलोजिस्ट को मत रखिए, तो जिनको सम्पूर्ण मानवता के बारे में प्रेम है, ऐसे लोगों को

उसमें रखिए और उनके नियंत्रण में साईंस और टेक्नोलोजी की प्रगति होनी चाहिए, ऐसा विचार अमेरिका मे, यूरोप में भी अभी आया है।

और दूसरी बात आज भी जो अध्यक्ष होने वाले है, डॉ अब्दुल कलाम उन्होनें एक किताब लिखी है "इण्डिया 2020"। उस किताब में उन्होनें स्पष्ट लिखा है कि विदेश से कोई भी टेक्नोलोजिकल एड न लेते हुए हमारे लिए आवश्यक जो टेक्नोलोजी है, हमारे टेक्नोलोजिस्ट स्वयं वो विकसित कर सकते हैं, कोई बाहर से टेक्नोलोजिकल एड लेने की आवश्यकता नहीं हैं और हमारे टेक्नोलोजिस्ट, हमारे साईंटिस्ट अपने ही भरोसे 2020वां साल जब आएगा उसके पहले ही, भारत को दुनिया के "फ्रंट रैंकिंग नेशन्स्" में बिठा सकते है। एक ही बात उन्होनें कही कि इसके लिए शर्त एक ही है, कि विल पॉवर चाहिए, इच्छा शक्ति चाहिए। अभाव तो इसी बात का है।

तो इस तरह से इन्वेस्टमेन्ट के बारे में, टेक्नोलोजी के बारे में उन्होनें अपने हित को ध्यान में रखकर प्रोपेगण्डा किया। हमारे इंग्लिश एज्यूकेटिड लोग, हमारे राजनैतिक नेता उसी के शिकार बन गए, और कहने लगे कि हम तो कुछ नहीं कर सकते, आत्मनिर्भर नहीं हो सकते। ऐसी बात नहीं है, हो सकते है, लेकिन लोगों में देश भक्ति का जागरण होना चाहिए। देश के लिए त्याग करने का आह्वान होना चाहिए, सब कुछ हो सकता है। यह न सोचते हुए, जिस समय विश्व व्यापार संगठन का निर्माण हुआ, (वर्ल्ड ट्रेड ऑरगेनाईसेशन) भारत सरकार ने जनता को अंधेरे में रखकर पार्लीयामेन्ट की अनुमति न लेते हुए, पार्लीयामेन्ट को भी अन्धेरे में रखकर सीधे "वर्ल्ड ट्रेड ऑरगेनाईसेशन" जॉइन कर ली क्योंकि खैर, अब वर्ल्ड ट्रेड ऑरगेनाईसेशन के हम सदस्य हो गए उसी समय स्वदेशी जागरण मंच ने कहा, कि यह बहुत गलत बात हुई है इससे देश का नुकसान होगा।

डब्ल्यू.टी.ओ. का सच – लिट्स और एलबुग की जबानी

यह विश्व व्यापार संगठन ये क्या बला है जरा देख लीजिए। जैसा मैने कहा, कि दूसरा मार्ग समाप्त होने के बाद तुरन्त ही पश्चिमी देशों ने,

गोरे देशों ने यह विचार शुरू किया कि नवस्वतन्त्र देशों पर अपना आर्थिक साम्राज्य कैसे फैलाया जा सकता है, कोई नवस्वतन्त्र देश अपने को गुलाम बनाने के लिए तैयार नहीं होगा, उनको गुलाम बनाने के वृत्ति में कैसा लाना चाहिए इसीलिए उन्होनें प्रचार, प्रोपेगेण्डा शुरू किया यह मैने प्रारम्भ में कहा। वास्तव में थोड़े विकसित देश, सारे दुनिया के अविकसित और विकसनशील गैर गोरे देशों पर, अपना साम्राज्य कैसे स्थापन कर सकते है इसका षड़यन्त्र कई दशको से चल रहा है, उसी का एक आविष्कार विश्व व्यापार संगठन है। विश्व बैंक उसी के लिए, विकसित देशों का साम्राज्य अविकसित देशों पर कैसे हो सकता है इंटरनेशनल मोनिट्री फण्ड उसी के लिए है, अमेरिकन सरकार भी उसी प्रयास में हैं।

आपको आश्चर्य होगा, विश्व बैंक के इकोनोमिक एडवाईसर मिस्टर स्टिग लिट्स जिन्होनें अभी तीन साल पहले इस्तिफा दिया है, उनका स्टेटमेंट आप पढ़िए। उन्होनें स्पष्ट रूप से कहा कि विश्व बैंक के "मेमोरेण्डम ऑफ एसोसिएशन" में जो लिखा था उसके कारण मैने वहां सर्विस ली, मुझे लगा अच्छे अच्छे उद्देश्य है, प्रत्यक्ष अब मैने अनुभव किया कि यहाँ तो गरीब देशों का शोषण करने की प्रक्रिया चल रही है, इसीलिए मैने उसको छोड़ा है और **विश्व बैंक गरीब देशों का शोषण किस ढंग से करती है इसमें प्रक्रिया दी है, चार सेट में प्रक्रिया दी है। आप मूल स्टेटमेन्ट पढ़ लीजिए, प्राईवेटाइसेशन से शुरूआत करके गरीब देश को लोन देना, लोन देते समय अपनी शर्ते लगाना, शर्तों के कारण उसको गरीब बनाना और गरीब बनाने के बाद उसको गुलाम बनाना, यह सारी प्रक्रिया मिस्टर स्टिग लिट्स ने दी है,** जिन्होने अनुभव के आधार पर लिखा है।

वैसे ही "इन्टरनेशनल मोनिट्री फण्ड" के टॉप ऑफीशीयल डेविसन एल बुग इन्होनें तो यहाँ तक लिखा कि **"मैने इतना पाप कर्म किया है इन्टरनेशनल मोनिट्री फण्ड में रहते हुए, कि गरीब लोगों के खून मेरे हाथ पर है और दुनिया की सारी नदियां आकर भी मेरा हाथ**

साफ नहीं कर सकती इतना खून मेरे हाथ पर है, इसका मुझे पश्चाताप हो रहा है।'' ऐसा उन्होनें कहा है। जो जानकारी रखते हैं, वे यह सब बातें कहते हैं। विश्व व्यापार संगठन इसीलिए स्थापन किया गया कि उसके अन्दर सब देश आ जाए, सब देश आते हैं तो उसमें जो गोरे देश हैं, वह गैर गोरे देशों पर अपना प्रभाव जमा सके।

वहां की कार्यशैली क्या है ? ऐसा है, कि वहां जितने सदस्य हैं विकसित, अविकसित, गोरे, गैर गोरे सबने मिलकर और विचार–विमर्श करते हुए निर्णय लेना, यह वास्तव में लोकतान्त्रिक पद्धति है, पर वहां ऐसा नहीं होता है। वहाँ क्या करते हैं कि गोरे देशों के 8–10 प्रतिनिधि पहले इकट्ठा आते हैं, उसको ''ग्रीन रूम'' कहते हैं और गोरे देशों के हित के लिए गैर गोरे देशों पर क्या निर्बन्ध लगाने चाहिए इसका विचार करते हैं, और वो विचार होने के बाद ग्रीन रूम के बाहर आते हैं और बाहर जो लोग हैं, उनको बताते हैं कि भई यह निर्णय हो चुका है, इसमें चर्चा नहीं, कुछ नहीं।

मलेशिया के प्राइम मिनिस्टर महाथिर मोहम्मद ने इसके खिलाफ आवाज उठाई, भारत ने आवाज नहीं उठाई। भारत के प्रतिनिधि जो डब्ल्यू टी ओ में जाते थे वो तो यूरोप अमेरिका के लोगों के सामने झुक जाते थे, इसीलिए चित्रा सुब्रह्मणियम ने एक पुस्तिका लिखी है कि ''इण्डिया इस फोर सेल'', उसमें दिया है कि कैसे हमारे प्रतिनिधि तैयारी भी नहीं करते, बोलते भी नहीं।

एमनेशिया की बीमारी

बाद में इस परिस्थिति में अन्तर आया हम लोगों के कारण, तो वहां जो गैर गोरे देश है, उनकी ओर से महाथिर मोहम्मद ने सबसे पहले अपनी आवाज उठाई, उन्होनें एक समिति का निर्माण किया, उसका नाम था ''साउथ कमिशन''। उसके अध्यक्ष थे मिस्टर न्येरेरे, तानजानिया के और जनरल सेक्रेटरि थे डॉ. मनमोहन सिंह, और उनको बताया गया, कि

किस तरह से आर्थिक आक्रमण हो रहा है, किस तरह से आर्थिक साम्राज्यवाद आ रहा है, इसका अध्ययन करना और उसको रोकने के लिए क्या उपाय करने चाहिए, यह सुझाव देना है यह काम उसको दिया था, उस कमेटी की रिपोर्ट आपको मार्केट में भी मिल सकती है "चैलेंज्ड टू दी साउथ" उस रिपोर्ट का नाम है। यह पूरी रिपोर्ट डॉ. मनमोहन सिंह के नेतृत्व में बनाई गई है जिसमें गोरे देशों को कैसे रोका जा सकता है यह भी बताया गया है साउथ साउथ कापरेशन जैसे कुछ इलाज बताए गए हैं कि कैसे रोक सकते है, आप वो पढ़ेंगे तो आपको लगेगा स्वदेशी जागरण मंच का आदमी है वह लिख रहा है किन्तु यही डॉ. मनमोहन सिंह जैसे ही फाईनेन्स मिनिस्टर बन गए जो उन्होनें लिखी हुई बातें थी वो भूल गए, यह आश्चर्य की बात है जैसे यशवंत सिन्हा की बात है।

स्वदेशी जागरण मंच की एक चिन्तन बैठक नागपुर में हुई थी उसमें तीनों दिन यशवंत सिन्हा उपस्थित थे आखिर दिन समारोप में उनका भाषण हुआ उन्होनें कहा विश्व व्यापार संगठन में रहने के कारण भारत का नुकसान हो रहा है हमें हिम्मत के साथ विश्व व्यापार संगठन को छोड़ देना चाहिए। यह यशवंत सिन्हा का भाषण था, लेकिन जैसे फाईनेन्स मिनिस्टर बन गए अपनी कही हुई बात भूल गए, मालूम होता है कि फाईनेन्स मिनिस्टर बनते ही एक बीमारी हो जाती है जिसका नाम अंग्रेजी में हैं एमनेशिया, एमनेशिया का मतलब है कि पूर्णविस्मरण, मैं कौन हूँ, कहां से आया हूँ, सारा भूल जाते हैं यह एमनेशिया फाईनेन्स मिनिस्टर बनने के कारण हो जाता है इसके द्वारा जैसे डॉ. मनमोहन सिंह वैसे यशवंत सिन्हा भी सब भूल गए और गलत बातें बोलने लगे।

डब्ल्यू.टी.ओ. – गोरे देशों के दोहरे मापदण्ड

स्वदेशी जागरण मंच चाहता है कि हमारा देश आत्मनिर्भर हो लेकिन विदेशियों का षड़यन्त्र चल रहा है, कि हमारे देश के कृषि पर हमारे देश के एक–एक उद्योग पर विदेशियों का कब्जा हो जाए। अब हमारा कृषि प्रधान देश है विश्व व्यापार संगठन में सबके लिए एक स्टेन्डर्ड

नहीं हैं, हमारे लिए अलग है अमेरिका के लिए अलग है, अब कृषि की दृष्टि से केवल उदाहरण के लिए बताता हूँ अमेरिका ने अपने किसानों को जो पहले सब्सिडी मिलती थी, उससे चार गुना सब्सिडी उन्होनें बढ़ाई है, भारत और विकासनशील देशों को अमेरिका कहता है, तुम अपने सब्सिडी कम करो और आखिर में सब समाप्त करो। अपने किसानों को, वे सब्सिडी बढ़ा रहे हैं, हम लोगों को कहा कि सब्सिडी खत्म करो ? कारण क्या है ? अब देखिए अमेरिका का एक कानून है, 1988 का एक कानून है उसमें स्पेशल 301 करके क्लॉज है, उसमें स्पष्ट दिया है कि बाहर के देश का यदि कोई भी माल हमारे बन्दरगाह में आता है और वो हमारे देश में उतारने से हमारे देश के उद्योग और कृषि को नुकसान होगा, ऐसा यदि हमें लगता है, तो हम बन्दरगाह से माल को उतरने नहीं देंगे, वापिस भेज देंगे लेकिन साथ ही साथ उसमें ऐसा है कि हमारा माल यदि किसी के यहां जाता है, उसके बन्दरगाह में यदि अमेरिका का माल आता है उसने हमारा माल उतार लेना ही चाहिए यदि वे हमारा माल नहीं उतार लेंगे, और अपने मार्केट में नहीं भेजेंगे तो हम उसके ऊपर आर्थिक प्रतिबन्ध लगायेंगे ये कौन सी नीति है और वर्ल्ड ट्रेड ऑरगेनाईसेशन के जो नियम देखिए।

हमारी सरकार कहती है कि हम वर्ल्ड ट्रेड ऑरगेनाईसेशन से कैसे बाहर आ जायेंगे ? ये सारा ऑरगेनाईसेशन दुनिया का नहीं है, यह विकसित देशों के लिए हैं, और विकसित देश के हित के लिए इसका उपयोग किया जा रहा है। अब देखिए कि वर्ल्ड ट्रेड ऑरगेनाईसेशन में जो विकसनशील देश की मेजोरिटी है, उनकी बात मानी नहीं जाती गोरे देश विकसित देश 8–10 है, एक्चूली 8 ही हैं, उनका उनकी दादागीरी सब पर चलती है।

डब्ल्यू.टी.ओ. : तोड़ो यां छोड़ो

महाथिर मोहम्मद ने एक बात कही थी पहले तो महाथिर मोहम्मद ने भारत सरकार को प्रार्थना की कि जितने विकसनशील देश है उनका

एक ब्लाक बनाने की आवश्यकता है, ओर चूंकि भारत, यह विकसनशील देशों में सबसे बड़ा है भारत में हमारा नेतृत्व करना चाहिए, हम आपका नेतृत्व मानने के लिए तैयार है, यह बात महाथिर मोहम्मद ने सबकी ओर से कही, भारत ने नेतृत्व लेने से इन्कार कर दिया फिर उन्होनें यह कहा वर्ल्ड ट्रेड ऑरगेनाईसेशन के अन्तर्गत रहते हुए जो विकसनशील देश है, उन्होनें अपना एक ब्लाक बनाना चाहिए, अपना एक ग्रूप बनाना चाहिए, इस ब्लाक ने विकसित देशों को धमकी देनी चाहिए कि ,डब्ल्यू टी ओ में आप हमारे साथ इक्वल फुटिंग माने बराबरी का व्यवहार कीजिए और यदि आप इक्वल फुटिंग का व्यवहार नहीं करते हम डब्ल्यू टी ओ छोड़ देंगे, वो तो इक्वल फुटिंग का व्यवहार करने वाले नहीं हैं, उनको दादागीरी चलाना है, तो डब्ल्यू टी ओ छोंड़ देना है और उसके बाद **स्वदेशी जागरण मंच ने यह कहा कि विकसनशील देशों ने एक ग्रूप बनाकर पहले डब्ल्यू टी ओ में रहकर धमकी देना और वो मानेंगे नहीं तो डब्ल्यू.टी.ओ. के बाहर आकर सैकण्ड डब्ल्यू.टी.ओं, दूसरा विश्व व्यापार संगठन विकसनशील देशों का अलग खड़ा करना और उनके साथ हम स्पर्धा करें उनके साथ हम झगड़ा करें, सभी विकसनशील देश एकत्रित होकर ऐसा हम लोगों ने कहा।**

ऐसा है शुरू शुरू में जब हम बोलते थे, तो वो कहते थे कि आपका बोलने का कोई उपयोग नहीं है। जैसा कहा जाता है कि बुढ़िया कहती तो सच है कि लेकिन सुनता कौन है आपने देखा होगा, ऐसा था कि हम लोग अभी जो नई सरकार आई है नई सरकार के लोगों से प्रधानमंत्री को लेकर सबके साथ हम बात करते थे, उनको समझाने की कोशिश करते थे, उनको समझाते थे, तो वे लोग कहते थे कि हम लोग समझ गए हैं, लेकिन हमारे वापिस आने के बाद ब्यूरोक्रेट्स उनके पास पहुंचते थे, ब्यूरोक्रेट्स उनको कहते थे, कि अरे यह स्वदेशी वाले यह क्या जानते हैं ? मजदूर संघ, किसान संघ वाले अर्थशास्त्रक क्या जानते हैं ? इनको तो अर्थशास्त्र का पता ही नहीं है ये केवल भावनाप्रधान है, इमोशनल हैं, सेन्टीमेन्टल है तो फिर सरकार का निर्णय बदल जाता था

अब आप जानते हैं कि शुरू से हमारे देश में एक बीमारी है, अच्छे अच्छे लोग भी खरीदे जाते हैं, छोटे लोग तो खरीदे जाते ही हैं, बड़े लोग भी खरीदे जाते हैं, ब्यूरोक्रेट्स खरीदे जाते हैं, लीडर लोग भी खरीदे जाते है, कुछ मिनिस्टरस् भी खरीदे जाते हैं और जो प्रतिष्ठित लोग हैं उनको खरीदने का प्रतिष्ठित रास्ता भी है, क्रूड़ मेथड़ नहीं है प्रतिष्ठित रास्ता है उनके किसी रिश्तेदार को अमेरिका में सारे शिक्षा दिक्षा के लिए भेजना, विश्व बैंक में नौकरी देना, आई.एम.एफ. में नौकरी देना, तरह–तरह के मार्ग हैं जो प्रतिष्ठित दिखते हैं, और इसके कारण हम लोग जो बोलते थे उसका प्रभाव नहीं होता था।

हम लोगो ने, मजदूर संघ, किसान संघ ने, बाकी लोगों ने भी अवश्य इसके बारे मे आवाज उठाई वह आवाज जब प्रबल हो गई तो फिर सरकार को भी सोचना पड़ा, कि ब्यूरोक्रेटस की बात मानने से नहीं चलेगा, जनमत जागरण हुआ है, और उसके कारण आपने देखा होगा कि दोहा में मिनिस्टर मारन ने वही बात कही, जो हम लोग कहते थे। दोहा में मिनिस्टर मारन को कितनी मात्रा में यश आया, कितनी मात्रा में अपयश आया यह महत्व का प्रश्न नहीं है। महत्व का प्रश्न यह है कि शुरू से लेकर आज तक कभी भी भारत सरकार ने वहां प्रतिकार नहीं किया था दोहा में प्रतिकार किया और यह हम सब लोगों के प्रभाव का दबाव का प्रभाव है, यह बात आप ध्यान रखिए। वहां से जब मारन वापिस आए तो हमको किसी ने कहा कि आप जाकर उनका अभिनन्दन कीजिए, हमने पबलिकली उनका अभिनन्दन किया, मारन ने दोहा में जो भूमिका निभाई उसका हमने सार्वजनिक रूप से अभिनन्दन किया, फिर हमने कहा कि भई जाकर नहीं मिलेंगे। बोले क्यों ?

उसी समय से अमेरिका के प्रयास चल रहे थे कि इनके विरोध को कमजोर कैसे बनाया जाए, वहां जो विश्व व्यापार संगठन में कमजोर देश हैं बिल्कुल गरीब देश हैं, उनको खरीदने का काम वहीं शुरू हुआ था

उनको खरीदने का काम उनके प्रतिनिधियों का कहना कि तुम चले जाओ, और वहीं से ये काम शुरू हुआ था कि हमारे कुछ ब्यूरोक्रेट्स तो पहले से खरीदे गए हैं, बाकी लोगों को भी कैसे खरीदा जा सकता है यह अमेरिका का प्रयास चल रहा है हम जानते हैं, इसीलिए हमने कहा कि हम मिनिस्टर मारन को धन्यवाद देते हैं और अभिनन्दन करते हैं, किन्तु प्रत्यक्ष जाकर हम नहीं मिल सकते क्योंकि दो साल के अनतर्गत क्या क्या परिणाम होंगे, यह देखना पड़ेगा अब दोहा के बाद दो साल के बाद मंत्री परिषद होने वाली है मंत्री परिषद में भारत सरकार ने अपनी भूमिका दोहा के जैसे नही रखनी चाहिए, इसके लिए अमेरिका जी–जान से कोशिश कर रही है क्या उस कोशिश का प्रभाव होता है यां हम लोगों का प्रभाव जैसा था वैसे कायम रहता है यह देखना पड़ेगा क्योंकि सरकार आरग्यूमेन्ट्स नहीं सुनती यह दुख की बात है आरग्यूमेन्ट्स से वह नहीं मानती दबाव से मानती है पहले विश्व बैंक, इंटरनेशनल मोनिट्री फण्ड, अमेरिकन सरकार, यूरोप की सरकारें इनका दबाव था, इसके कारण स्वदेशी विरोधी नीति लेकर चले थे। बीच में स्वदेशी जागरण मंच, मजदूर संघ, किसान संघ और बाकी सभी संस्थाएं हम लोग कोई देशावृति का ठेका हमारा है ऐसा नहीं कहते, देशभक्त सभी लोग हैं, सभी लोगों ने आवाज उठाई, उस दबाव में आकर दोहा में ठीक भूमिका भारत सरकार ने ली किन्तु अभी अगले मंत्री परिषद में फिर से दोहा की भूमिका नहीं अपनानी चाहिए सरकार ने झुकना चाहिए, यह प्रयास चल रहा है इसके कारण अगले मंत्री परिषद तक में अभी थोड़ा समय रहा है 9–10 महीने का समय रहा वे सवा साल का समय रहा तो हमें इतना जन–जागरण करना है इसके कारण हमारा दबाव फिर से आ जाए, जनमत का दबाव फिर से आ जाए और अमेरिकन दबाव के सामने जो सरकार झुकती है, उनको पता चले कि यदि हम अमेरिकन सरकार के समक्ष झुकेंगे तो फिर हमारी भी जान खतरे में है इसीलिए हमारे दबाव के कारण वो ठीक भूमिका जैसे दोहा में ली वैसी उन्होंनें लेनी चाहिए, इतना जन–जागरण और जनमत का प्रभाव बढ़ाना चाहिए।

जन–विरोधी आर्थिक नीतियाँ

हमने हमारी सरकार से यह कहा भारतीय मजदूर संघ का अखिल भारतीय अधिवेषण त्रिवेन्द्रम में हुआ था। वहां ओपन सैशन हुआ बहुत बड़ी अच्छी हाजरी थी उसमें सारे यह स्वदेशी वगैरह की बात हमने कही, और उसके बाद हमने यह कहा कि भई भाजपा की सरकार नहीं हमारे हित के लिए छोड़िए, किसान मजदूरों के लिए छोड़िए, अपने खुद के लिए तो कुछ अपना काम करना चाहिए, भाजपा की ईज्जत बचाने के लिए तो उन्होनें काम करना चाहिए क्योंकि **मैने यह कहा कि आप गलत नीतियां अपना रहे हैं, आर्थिक नीतियां गलत अपना रहे हैं जिसके कारण लाखों मजदूर बेरोजगार होने वाले हैं, किसान भूखे मरने वाले हैं, आत्महत्या किसान पहले ही कर रहे हैं, पहले ही वह कर्जे में हैं कैसे कर्जा भरना नहीं जानते, आप बाहर से माल ला रहे है, आयात शुल्क उठा लिया, क्वांटिटेटिव रिस्ट्रिक्शन उठा लिया, इसके कारण कृषि का माल जो विदेश से आता है, वो सस्ते में बेचा जाता है, हमारे कृषकों का माल ज्यादा महंगा हो जाता है इसीलिए वह पड़ा रहता है, कृषकों को आत्महत्या के अलावा कोई रास्ता नहीं रहेगा, लाखों मजदूर बेरोजगार हो रहे हैं।**

मतदाता भारतीय है, विदेशी नहीं

तो त्रिवेन्द्रम में हमने कहा कि भई आप अपनी पार्टी का तो विचार कीजिए, आपके पार्टी को आज नहीं कल, कल नहीं परसो चुनाव में आना पड़ेगा यां नहीं तो चुनाव में आपके जो मतदाता रहेंगे, वो अमेरिकन नहीं रहेंगे जिनके दबाव में आप हर काम कर **रहे हैं, वह यूरोपियन नहीं रहेंगे जिनके दबाव में आकर आप काम कर रहे हैं, वह तो भारतीय रहेंगे।** और भारतीय लोगों को आप यदि गलत ढ़ंग से और उनको सतायेंगे आपको मत कैसे मिलेंगे, संयोग की बात थी कि त्रिवेन्द्रम में हमारा भाषण हुआ दूसरे दिन से इलेक्शन्स के रिसल्टस आना शुरू हुआ उतर प्रदेश, पंजाब, उतरांचल और सारे

रिसल्टस क्या आए आप जानते हैं, कोरेसपोन्डेन्ट्स हमारे पास आए। क्या ठेंगड़ी जी आप जानते थे कि क्या–क्या होगा, हमने कहा हम जानते नहीं थे। यह कॉमन सेन्स की बात है, तो अपने पार्टी के हित के लिए तो भी इन्होनें बहुत ठीक ढंग से व्यवहार करना चाहिए।

प्रिंट मीडिया में विदेशी निवेश

ठीक ढंग से व्यवहार नहीं हो रहा इसका एक ही उदाहरण देकर और मैं यह भाषण पूरा करना चाहता हूं। अभी–अभी की बात है, फोरेन प्रिंट मिडिया फोरेन इन्वैस्टमेन्ट प्रिंट मीडिया में लाना यह पुराना षड़यन्त्र है, पुरा षड़यन्त्र है, नई बात नहीं है, चुनाव होने के पहले हमने बीजेपी के नेताओं को कहा था, कि आप इन्फोरमेशन टैक्नोलोजी डिपार्टमेन्ट फलानै फलानै आदमी को मत दिया। उन्होनें कहा अरे आश्चर्य की बात है अभी तो चुनाव हुआ ही नहीं आप पर्टीकुलर आदमी का नाम ले रहे हैं, पर्टीकुलर डिपार्टमेन्ट का नाम ले रहे हैं, तो हमने कहा कि हम अफवाहों के आधार पर नहीं मेरे पास डायरेक्ट जानकारी है कि इस आदमी को अपना हथियार बनाकर, अपना माध्यम बनाकर, हिन्दुस्तान के मीडिया पर छाने का षड़यन्त्र विदेशीयों का हैं।

उसको इतने दिन हो गए, इन्होनें प्रयास किया। किन्तु प्रेस वालों ने विरोध किया, जॉइन्ट पार्लियामेन्ट्री कमीटि इसके लिए बिठाई गई, उन्होने स्पष्ट कहा कि हमारे प्रिंट मीडिया में फॉरेन इन्वेस्टमेन्ट नहीं आनी चाहिए, अचानक निर्णय आया कि प्रिंट मीडिया में फॉरेन इन्वेस्टमेन्ट आ रही है। अब निर्णय लिया प्रेस वालों के विरोध के बावजूद, जॉइन्ट पार्लीयामेन्ट्री कमेटी के विरोध के बावजूद, जनता की राय न लेते हुए, पार्लीयामेन्ट की राय न लेते हुए, एकदम यह अचानक हमला हुआ।

संघ की सहमति का झूठा प्रचार

लेकिन अपनी चमड़ी बचाने के लिए एक प्रचार शुरू किया, क्या था उनमें कहा कि प्रिंट मीडिया में फॉरेन इन्वेस्टमेन्ट आनी चाहिए, इस

बात को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सर–संघचालक माननीय सुदर्शन जी भी अनुमति दे रहे हैं, उनकी भी इच्छा है, अब इतनी झूठी बात आकाशवाणी से बार–बार प्रसारित होती है, आपने सुना होगा, और समाचार पत्रों मे से, कई समाचार पत्र मैं ऐसा नहीं कहता सभी समाचार पत्र झूठ लिखते थे, ए सेक्शन ऑफ द प्रेस कई समाचार पत्र इसका प्रचार कर रहे थे। वास्तव में सुदर्शन जी ने यह कहा ही नहीं, सुदर्शन जी को जब पूछा गया तो सुदर्शन जी ने कहा कि फॉरेन डायरेक्ट इन्वेस्टमेन्ट को हम लाए इसका उन्होनें स्वागत नहीं किया। उन्होनें कहा कि फॉरेन डायरेक्ट इन्वेस्टमेन्ट को तो मत लाईए लेकिन हां एन. आर. आई. हैं एन. आर. आई. माने अनिवासीय भारतीय, उनका पैसा यदि आता है, उसमें आपति नहीं हैं, तो उन्होनें एन.आर.आई. का स्वागत किया फॉरेन डायरेक्ट इन्वेस्टमेन्ट का स्वागत नहीं किया। सरकार ने गलत ढ़ंग से प्रचार किया, अब इससे और गलत काम क्या हो सकता है ?

वास्तव में स्वदेशी जागरण मंच प्रिंट मीडिया में जो फॉरेन इन्वेस्टमेन्ट आ रही है उसका विरोध कर रही है, इतना ही नहीं इलेक्ट्रोनिक मीडिया में फॉरेन इन्वेस्टमेन्ट हैं, हमारा कहना है कि इलेक्ट्रोनिक मीडिया से पूरी तरह से जो फॉरेन पैसा जो है वापिस जाना चाहिए, तो हम तो इलेक्ट्रोनिक मीडिया में से भी फॉरेन इन्वेस्टमेन्ट वापिस हो जाए ऐसा कह रहे हैं। और यह कह रहे हैं कि फॉरेन डायरेक्ट इन्वेस्टमेन्ट का आर.एस.एस. ने स्वागत किया, इससे और झूठ बात क्या हो सकती है, मानो वह अभी झूठ बोलने पर भी प्रेस के कुछ लोग, सरकार के कुछ लोग उतारू हो गए हैं ऐसा दिखते हैं, ऐसी परिस्थिति में से हम जा रहे हैं।

विनिवेश भी गलत तरीके से

सवा साल के बाद डब्ल्यू. टी. ओ. का मंत्री परिषद का जो मामला आने वाला है, उसके लिए दबाव बनाना है और यह जो एक–एक उद्योग विदेशीयों के हाथ में जा रहा है, प्राईवेटाईसेशन कहते हैं, अरे जो प्रोफिट मेकिंग इन्डस्ट्रीज है, वो भी आज प्राईवेट लोगों को दे रहे हैं। अगर

आपको देना ही है तो वहां के मजदूरों को दीजिए, अपने अपने उद्योग वहां के मजदूर चला सकते हैं, लोग कहते हैं मजदूर कैसे चलायेंगे, हमने कहा मिनिस्टर को भी क्या जानकारी होती है, वो भी मैनेजर और टैक्नोलिजिकल लोगों की सहायता से चलाते हैं, मजदूर भी चलायेंगे। लेकिन प्रोफिट मेकिंग इन्डस्ट्रीज भी पब्लिक सेक्टर की प्राईवेटाईसेशन कर रही है।

राष्ट्र की सम्प्रभुता खतरे में

एक–एक बात गलत ढ़ंग से चल रही है, इस दृष्टि से जन–जागरण हो, लोगों को शहरों में, गांवों में, इस बात का पता चले कि गलत पॉलीसीस है और उसके कारण एक प्रचण्ड दबाव उधर से दबाव आएगा, विश्व बैंक, इंटरनेशनल मोनिट्रि फण्ड, अमेरिकन सरकार, यूरोप की सरकारें इनका दबाव आएगा, और उनका विरोध करना है तो इधर से जबरदस्त दबाव जनमत का जन–जागरण का जाना चाहिए, तभी तो देश का बचाया जा सकता है, वरना, अपना देश भी आर्थिक साम्राज्यवाद में आ जाएगा, तो हमारी सोवेरेनिटी खतरे में हैं, समप्रभूता खतरे में है।

सोवेरेनिटी की परिभाषा अपने शास्त्रों ने की है, **"इक्षवांकुनामियम् भूमि सशैले जलकानना, मृगपक्षमनुष्याणाम् निग्रहानुग्रहेशु"**, याने सारी भूमि इक्षवाकु की है, शैल, जल, कानन इनके साथ सभी भूमि इक्षवाकु की है, **'मृगपक्षमनुष्याणाम'** मृग हो पक्षी हो, मनुष्य हो सबका निग्रहानुग्रहेशु अपि उनका निग्रह करना और उनपर अनुग्रह करना, इसका पूरा अधिकार इक्षवाकु को है, यह सारी सोवेरेनिटी की परिभाषा है। हम सोवेरन है ऐसा लिखा गया है, लेकिन सोवेरेनिटी पर आंच आ रही है, आक्रमण हो रहे हैं, अपनी सोवेरेनीटि जाएगा, इन्डिपेन्डेन्स जाएगा, इस दृष्टि से यह जो गोरे देशों का षड़यन्त्र है, उसको फेल करने के लिए और उस दृष्टि से भारत सरकार स्वदेशी के पक्ष में रहे, विदेशियों के पक्ष में न रहे यह दबाव सरकार पर लाने के लिए सब लोगों ने ज्यादा से ज्यादा प्रयास करना चहिए, इतनी ही प्रार्थना करते हुए मैं मेरा भाषण पूरा करूंगा।

देशभक्त अंतर्राष्ट्रीयतावाद के खिलाफ नहीं हैं। राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता का उनका आग्रह अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के विरुद्ध नहीं जाताहै, बशर्ते उसका आधार समानता हो और उसमें हर देश के स्वाभिमान का सम्मान किया जाए। भूमंडलीकरण के पैरोकारों से उनका विरोध अलग और ज्यादा ठोस सवाल पर है।

स्वदेशी के आग्रही इस विचार को मानने के लिए तैयार नहीं है कि विकास का पश्चिमी मॉडल सार्वभौम है और दुनिया भर के लोगों को उसकी नकल करनी चाहिए। हालांकि वे सांस्कृतिक आदान-प्रदान को स्वीकारते हैं, मगर इस बात पर जोर देते हैं कि हर समाज की अपनी संस्कृति होती है और हर देश की प्रगति और विकास के मॉडल का उस देश के सांस्कृतिक मूल्यों के साथ तारतम्य होना चाहिए। आधुनिक बनने का मतलब पश्चिमीकरण नहीं है। आधुनिकीकरण के क्रम में राष्ट्रीय संस्कृतिक की भावना का आदर होना चाहिए। वे पश्चिम के हित में विभिन्न संस्कृतियों और राष्ट्रीय पहचानों को गड्ड-मड्ड कर देने की कोशिशों का विरोध करते हैं।

आधुनिक पश्चिमी तकनीक और आर्थिक प्रणाली के साथ एक ऐसी सभ्यता आ रही है जो गैर-पश्चिमी सभ्यताओं के अनुकूल नहीं है। विरोध का यह मूल आधार है।

-दत्तोपंत ठेंगड़ी

प्रकाशक :

स्वदेशी विचार केन्द्र

96, पत्रकार कॉलोनी, न्यू पॉवर हाऊस रोड, जोधपुर 342 003

दूरभाष (0291) 2647968